साहित्य बाल-मनोरञ्जन

दूसरा भाग

[illegible]र्वी श्रेणी के लिए

राय साहब कमला प्रसाद बी. ए., एल. टी.
अस्थायी इन्स्पेक्टर आफ़ स्कूल्स, पटना डिवीज़न द्वारा
रचित

मैकमिलन ऐण्ड कम्पनी, लिमिटेड
कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लण्डन
मूल्य ।)

मैकमिलन कम्पनी की अन्यान्य साहित्य-पुस्तकें

पूर्ब्बदेशीय किस्से कहानियाँ

(सचित्र)

श्रेणी १

सं० १ हितोपदेश से सङ्कलित हिन्दुस्तानी कथायें १म परिपाटी =)

सं० २ हितोपदेश से सङ्कलित हिन्दुस्तानी कथायें २य परिपाटी =)

श्रेणी २

सं० १ अनवार सुहेली से सङ्कलित फारसी कहानियाँ १म परिपाटी =)

सं० २ अनवार सुहेली से सङ्कलित फारसी कहानियाँ २य परिपाटी =)

श्रेणी ३

सं० १ राम और सीता का जन्म, बनवास और भ्रमण (रामायण से) =)

सं० २ सीता का अन्तिम वनवास रामायण (उत्तर काण्ड) और सीतार बनवास से =)

श्रेणी ४

सं० १ महाभारत से सङ्कलित कथायें १म परिपाटी =)

सं० २ महाभारत से सङ्कलित कथायें २य परिपाटी =)

श्रेणी ५

सं० १ राजा और लाल—बागो बहार में राजा की कहानी से =)

सं० २ बैताल पचीसी की पन्द्रह कहानियाँ =)

साहित्य बाल-मनोरञ्जन

दूसरा भाग

पाँचवीं श्रेणी के लिए

राय साहब कमला प्रसाद बी. ए., एल. टी.
अस्थायी इन्स्पेक्टर आफ़ स्कूल्स, पटना डिवीज़न द्वारा
रचित

मैकमिलन ऐण्ड कम्पनी, लिमिटेड
कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लण्डन
१९३०

भूमिका

आज से कुछ समय पहले "साहित्य बाल-मनोरञ्जन" का प्रकाशन हुआ था जिस का द्वितीय भाग बिहार-उड़ीसा की प्राइमरी पाठशालाओं के चौथे स्टैण्डर्ड का पाठ्य ग्रन्थ था। इधर शिक्षा-विभाग के अधिकारियों ने पाठ्य-विधान में बहुत कुछ परिवर्त्तन कर डाला है। पहले की प्रकाशित पुस्तकें आज उस के अनुकूल नहीं हैं। यही कारण है कि उक्त पुस्तक में बहुत कुछ परिवर्त्तन कर एवं ठीक ठीक पाठ्य क्रम के अनुकूल बना कर उसे संशोधित एवं परिवर्द्धित रूप में बालकों के सामने उपस्थित किया गया है। अब इस संस्करण की उपयोगिता पहले की अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ गयी है।

ग्रन्थकार।

सूचोपत्र

साहित्य बाल-मनोरञ्जन

दूसरा भाग

ईश-विनय

ईर्षा = डाह। सुमार्ग = अच्छा रास्ता।

१

अशरण-शरण, दीन-जन-रक्षक, दयाधाम कहलाते हो।
हम बालक अज्ञान अहैं प्रभु ! क्यों न हमें अपनाते हो॥
दुखमय जग में पड़े हुए हैं; केवल तेरी आशा है।
भ्रान्त-चित्त हो भटक रहे हैं; होती बहुत निराशा है॥

२

क्रोध शत्रु है प्रबल हमारा नाश सदा वह करता है।
हे ! हे !! सकल जगत के स्वामी, तुम बिन दुख को हरता है॥
लोभ घमण्ड और ईर्षादिक ये भी शत्रु हमारे हैं।
चहूं दिशा हम घिरे शत्रु से पाते नहिं छुटकारे हैं॥

३

अब केवल तेरो ही आशा और न नाथ सहारा है।
बाँह गहो तुम हम दीनों की तुम्हें दीन अति प्यारा है॥
झूठ कपट अरु दम्भ करे नहिं जिस में सुखी रहें सब काल।
वर दो सुखी बनाओ सब को नाम तुम्हारा दीनदयाल॥

४

दया सभी जीवों पर करना सब धर्म्मों का है सिद्धान्त।
मेरे जी में वह फैला दो जिस से होय चित्त यह शान्त॥
मातु पिता गुरु की शिक्षा को मानि सहर्ष करें हम काम।
सभी जनों से प्रीति रखें अरु लेवें नहीं असत का नाम॥

५

विद्या सीख चलें सुमार्ग पर वर दो हे अन्तर्यामी।
रहें सुखी सब कोई जिस में द्वेष भाव छोड़ें स्वामी॥
हे कृपालु! हे, हे जगदीश्वर! तव पद सीस नवाते हैं।
दया करो दुख हरो नाथ यह अपना दुःख सुनाते हैं॥

—जगदीप नारायण।

प्रश्न—मनुष्य के शत्रु कौन कौन हैं?

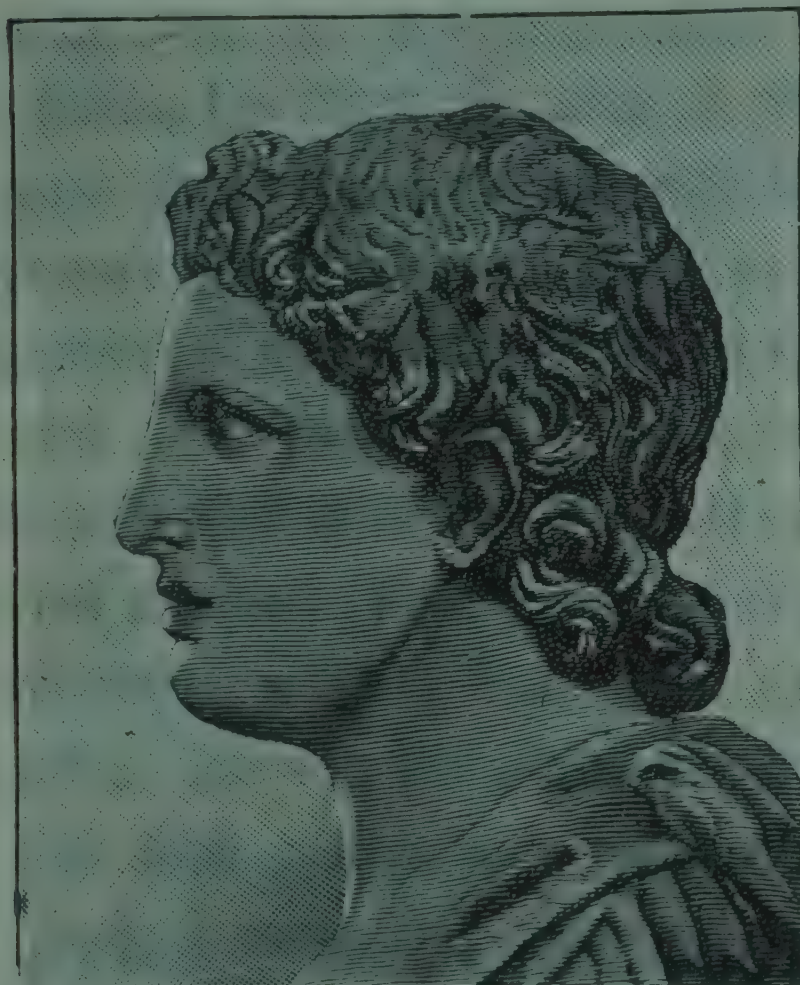
,,—ईश्वर को "अशरण-शरण" क्यों कहते हैं?

व्याकरण—"मोहन पढ़ता है" इस वाक्य में "मोहन" उद्देश्य और "पढ़ता है" विधेय है। जिसके विषय में कुछ कहा जाता है उसे उद्देश्य और जो कुछ कहा जाता है उसे "विधेय" कहते हैं।

अभ्यास—इन वाक्यों में उद्देश्य और विधेय बताओ :—

वह जंगल में लकड़ी काट रहा है। किसान खेत जोतता है। वह बालक व्याकरण सीखता है।

सिकन्दर के अन्तिम आदेश



स्मरण = याद।

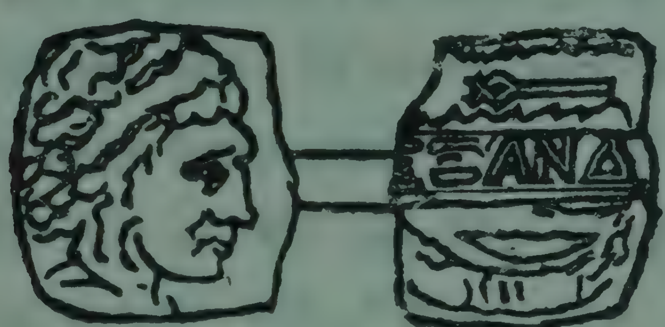
सिकन्दर बादशाह किसी समय में संसार का सब से बड़ा बादशाह था। वह अपनी माता का बड़ा भक्त था। माता भी उसे प्राणों से अधिक प्यार करती थी। एक समय किसी देश को विजय कर एक जङ्गल के मार्ग से वह अपने मन्त्री और सेनाओं के साथ अपनी राजधानी की ओर चला जा रहा था। मार्ग की थकावट के कारण उसने उसी जङ्गल में एक जगह डेरा डाल दिया। कुछ समय तक विश्राम करने के बाद

अचानक उसे अपनी मृत्यु के लक्षण दिखायी पड़े और उसे विश्वास हो गया कि अब मैं थोड़ी ही देर में इस संसार से सदा के लिए बिदा हो जाऊँगा।

यद्यपि उसकी मृत्यु उसके सर पर नाच रही थी तथापि उसके चेहरे से तनिक भी उदासी नहीं झलकती थी। यदि उसके मन में किसी बात को चिन्ता थी तो बस इसी की थी कि अन्त समय में मुझे माता का दर्शन नहीं होना चाहता है। कदाचित् मेरे मर जाने के पीछे पुत्र-स्नेह के कारण वह अपना प्राण-त्याग भी न कर दे—इस कारण उसने अपने मन्त्री को बुलाकर कहा कि अब मैं थोड़ी ही देर में इस संसार को छोड़ने-वाला हूं अतएव तुम मेरे मर जाने । समाचार मेरी माता को सुना कर उसे अनेक प्रकार से धीरज दिलाना और साथ ही तुम उसे तीन काम करने के लिए भी अवश्य कह देना।

पहला यह कि मेरे कफ़न के लिए किसी ऐसी दुकान से कपड़ा लाया जाना चाहिये जिस दुकान से किसी और मुर्दे का कफ़न नहीं खरीदा गया हो। दूसरा यह कि जिस समय मेरी लाश क़ब्रिस्तान के लिए जाने लगे उस समय मेरी जितनी लश्कर और धन-दौलत हो मेरे शव के साथ वहाँ तक जाय और मेरे दोनों हाथों को कफ़न से बाहर निकला हुआ रहने देना चाहिये। तीसरा यह कि जब उसे कभी मेरा स्मरण आवे तब वह मेरी क़ब्र के निकट जाकर मेरा नाम लेकर पुकारे। माता के ऐसा करने से मैं वहाँ पर प्रगट हूंगा। इतना कह कर सिकन्दर ने दूसरे लोक की यात्रा कर दी।

उसका मन्त्री इस घटना को देख कर बहुत आश्चर्य्यित हुआ पर अब वह कर ही क्या सकता था। वह बड़ा सच्चा और स्वामिभक्त था। उसने उसकी माता के निकट जाकर उस की कही हुई सब बातें ज्यों की त्यों कह सुनाईं। पुत्र की मृत्यु का समाचार सुन कर माता तत्काल मूर्च्छित हो गयी और हा पुत्र! हा पुत्र!! कह कर ज़मीन पर गिर पड़ी। किन्तु थोड़ी देर के बाद किसी प्रकार अपने हृदय को पत्थर बना कर अपने पुत्र की कही हुई बातें करने के लिए वह तैयार



हुई। वह जिस दुकान पर कफ़न खरीदने के लिए जाती उसी दुकान पर अपने बेटे की वह बात पूछती। पर सभी दुकानदार यही उत्तर देते कि मेरे यहाँ से भी कफ़न का कपड़ा बिक चुका है। जब उसे कहीं वैसी दुकान नहीं मिली तब उसे ऐसा ज्ञान हो गया कि संसार में बहुत लोक मर चुके हैं और सब किसी को एक न एक दिन अवश्य मरना पड़ता है तभी तो सभी दुकानदारों के यहाँ से कफ़न के कपड़े खरीदे गये हैं। ऐसा सोचकर अन्त में वह मोह को त्याग एक दुकान से कपड़ा ले कर लौट आई।

जब लाश जाने लगी, तब अपने पुत्र की बातें स्मरण कर

उसने उसके दोनों हाथ कफ़न से बाहर निकाल दिये। उस समय सिकन्दर के दोनों हाथों के निकले रहने और मुट्ठियों के खुले रहने से सब किसी को ऐसा ज्ञान हो रहा था कि मानो सिकन्दर यह कह रहा है कि—मैं इतना बड़ा चक्रवर्ती राजा था और मैंने छलबल कर इतना विभव भी एकत्र किया था किन्तु देखो इस समय मैं सब कुछ छोड़ कर खाली हाथ पसारे चला जाता हूं। इसी प्रकार एक दिन सब किसी को अपनी सम्पूर्ण धन दौलत छोड़ कर मेरे ही समान कूच करना पड़ेगा। इस दृश्य से उसकी माँ को संसार की असारता का ज्ञान हो गया।

एक दिन जब सिकन्दर की माँ अपने पुत्र के वियोग से बहुत व्याकुल हुई तब वह उसके वचनों को स्मरण कर उससे मिलने की इच्छा से क़ब्रिस्तान पर जा "पुत्र सिकन्दर पुत्र सिकन्दर" कह कर पुकारने लगी। इस पर उसके भीतर से यह ध्वनि सुन पड़ी कि तुम किस सिकन्दर को खोजती हो? न मालूम इस स्थान पर कितने सिकन्दर दफ़न किये जा चुके हैं। उसके भीतर से ऐसी ज्ञान भरी बातें निकलती हुई सुन कर वह संसार से एक दम उदास हो गयी और सब सांसारिक प्रपंचों को छोड़ ईश्वर के भजन में लवलीन हो गई।

प्रश्न—सिकन्दर का दूसरा उपदेश क्या था?

,,—सिकन्दर की माता का पुत्र शोक किस प्रकार दूर हुआ था?

व्याकरण—ऊपर के पाठ के अन्तिम चार वाक्यों में उद्देश्य और विधेय बताओ।

सर आइज़क न्यूटन

आकर्षण-शक्ति = खींचने का बल। आविष्कार = नयी खोज।

ऐसा कोई भी शिक्षित मनुष्य नहीं होगा जिसने प्रसिद्ध यूरोपीय विद्वान् सर आइज़क न्यूटन का नाम नहीं सुना हो। इनका जन्म इंग्लैण्ड के लिङ्कन नामक शहर के समीप ही किसी गाँव में सन् १७४२ ईस्वी में हुआ था; इनके पिता अपने पुत्र के जन्मोत्सव को नहीं देख सके थे क्योंकि सर आइज़क के जन्म के कुछ दिन पहले ही वे स्वर्ग-वासी हो गये थे।

सर आइज़क जिस समय उत्पन्न हुए थे उस समय उनका शरीर कुछ रोगी था। पर कुछ काल तक उनके रोग की दवा की जाने से फिर ये भलीभांति नीरोग हो गये। लड़कपन से ही इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र थी। अपने बालक की बुद्धि की चमत्कारी देख कर माता ने इनका नाम किसी देहाती स्कूल में लिखवा दिया। ये बड़े परिश्रम से वहाँ पढ़ने लगे। परिश्रम ही के बल से ये अपने समय के एक अद्वितीय विद्वान् हो गये हैं। पाठशाला में पढ़ते समय इन्हों ने जलघड़ी, धूपघड़ी आदि बनाना सिख लिया था। ये जब पाठशाला से अपने घर पर आते थे तब घर की दीवारों पर चिह्न खींचा करते थे। उसे देख देख कर इनकी माता इन पर अत्यन्त क्रोध किया करती थी। पर वह कुछ कर नहीं सकती थी। सर आइज़क का मन सदा गूढ़ विषयों की खोज में लगा रहता था।

गणित सम्बन्धी बातों के सोचने में ये खूब मन लगाते थे। परन्तु उस में उचित सहायता नहीं मिलने के कारण ये अपना अभीष्ट पूरा नहीं कर सकते थे। अब पाठशाला से कालेज आने पर इनकी आँखें खुल गयीं और वे कालेज में गणित और



सर आइज़क न्यूटन।

पदार्थ विज्ञान के तत्त्वों को ढूँढ़ निकालने में लग गये। जिसका फल यह हुआ कि थोड़े ही दिनों में इन्हों ने गणित के कई नये सिद्धान्तों की खोज की।

थोड़े दिनों के पश्चात् इन्हों ने पनचक्की, आदि बना लिया जिसके द्वारा इनके पड़ोसियों को बहुत लाभ होने लगा। इन सब चीज़ों का आविष्कार इन्हों ने विद्या पढ़ने के समय

में ही किया। २१ वर्ष की अवस्था में ये बी० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए।

पढ़ते ही समय से जल, वायु, चन्द्र, ज्वार, भाटा, नक्षत्र और सूर्य्य आदि का भेद जानने के लिए ये बहुत चिन्तित रहा करते थे।

एक दिन ये अपनी फुलवारी में बैठ बैठे यह विचार कर रहे थे कि आकाश में बिना किसी आधार के ये चन्द्र, सूर्य्य, पृथ्वी, आदि ग्रह किस प्रकार स्थिर हैं। उसी समय अचानक एक सेब का फल ज़मीन पर गिरा और इन्हों ने कुछ देर तक सोच कर यह निश्चय किया कि पृथ्वी में "आकर्षण शक्ति" है जिस से वह अपने केन्द्र की ओर सभी पदार्थों को खींचती है। ऐसे ही इन्हों ने सूर्य्य चन्द्र आदि के विषय में भी अपने सत्य सिद्धान्त स्थिर किये।

न्यूटन का स्वभाव बहुत ही अच्छा था। अपनी विद्या और परिश्रम के बल से विश्व-विख्यात हो जाने पर भी, अभिमान इन्हें छू तक नहीं गया था। बड़ी बड़ी कठिनाइयों के आने पर भी ये तनिक घबड़ाते नहीं थे वरन् ईश्वर पर विश्वास रख कर उनके दूर करने की चेष्टा किया करते थे। ऐसा जगत्प्रसिद्ध विद्वान् होने पर भी अपने विषय में अपनी मृत्यु के समय नम्रता पूर्व्वक इन्हों ने कहा था कि "मैं नहीं जानता कि संसार के लोग क्यों मुझे बहुत बड़ा विद्वान् और बुद्धिमान् समझते हैं जब कि स्वयं मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं अभी ज्ञानरूपी समुद्र के किनारे पर बैठ कर कङ्कड़ पत्थर चुन रहा हूं, अभी तो मेरे

सामने सत्य विद्याओं और ज्ञान का अपार समुद्र बिना ढूँढ़ा हुआ ही पड़ा है।"

प्रश्न—न्यूटन ने कैसे जाना कि पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है?

व्याकरण—ग्राम, पुस्तक, घोड़ा, और पाठशाला इन शब्दों में से हर एक से उसकी जाति भर का मतलब मालूम होता है। इसलिए ऐसे शब्दों को जाति वाचक संज्ञा कहते हैं।

न्यूटन, सूर्य्य, और गंगा कहने से किसी ख़ास चीज़ या व्यक्ति का बोध होता है। इसलिए ऐसे शब्दों को व्यक्ति वाचक संज्ञा कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से चार जाति वाचक और चार व्यक्ति वाचक संज्ञाएँ चुनो।

जलचर जीवों की साक्षी

आखेट=शिकार। निर्म्माण=तैयार करना।

एक किसान के लड़के का नाम परागमणि था। बालकपन ही से घर में परागमणि का मन नहीं लगता था। वह कहीं अकेला ही रह कर जीवन बिताना उत्तम समझता था। उसे ईश्वरभक्ति विशेष प्रिय मालूम होती थी। इसी कारण वह घर के झंझटों में फँसना नहीं चाहता था।

एक समय परागमणि का पिता अपने पुत्र को सब तरह से योग्य समझ कर उसे ही घर का मालिक बनाने के लिए कई मनुष्यों से राय पूछ रहा था। पिता की यह इच्छा परागमणि को किसी प्रकार मालूम हो गई। वह इन बातों को अच्छा नहीं समझ कर एक दिन रात्रि को उठा और चुपचाप घर-द्वार छोड़ कर जङ्गल में ईश्वर का भजन करने के लिए चला गया।

वह जङ्गल में कन्द, मूल, फल से अपनी प्राण-रक्षा कर, ईश्वर का भजन करने लगा। एक दिन उसे उस जङ्गल में कहीं जल नहीं मिला। वह बहुत प्यासा होने के कारण विशेष चिन्तित हो गया। संयोगवश घूमते-घामते एक स्थान में उसे भूमि के भीतर कुछ जल का आभास मालूम हुआ। यह देख उसने उसे खोदना आरम्भ किया। पर खोदते खोदते उसके भीतर से जल के बदले रुपये निकल पड़े। ऐसी घटना देख वह बड़े अचम्भे में पड़ कर सोचने लगा कि हे ईश्वर, मैं जिस फन्दे और झंझट के भय से भाग कर इस निर्जन स्थान में आया,

वह भय मुझे यहाँ भी लगा ही रहा। इतने में उसे यह आकाशवाणी सुनाई पड़ी कि "तुम इसके लिए चिन्ता मत करो। यह द्रव्य तुम्हारा नहीं है। इस रुपये से तुम इस स्थान पर एक सुन्दर मन्दिर निर्म्माण करो।"

परागमणि इस आकाशवाणी को सुन कर और अधिक चकित और विस्मित हो गया। पर अब वह कर ही क्या सकता था। उसने धैर्य्य धारण कर तथा इसे ईश्वरीय आज्ञा समझ कर उस स्थान पर एक अति सुन्दर मन्दिर शीघ्र ही बनवा डाला।

कुछ दिनों के पश्चात् उस स्थान का राजा उस जङ्गल में आखेट करने के लिए गया। जब वह लौटा आ रहा था तब उस सुनसान एवं निर्जन स्थान में ऐसे अनुपम मन्दिर को देख कर बड़ा आश्चर्य्यित हुआ। अन्त में परागमणि को अपने निकट बुला कर उसने उस मन्दिर के विषय में कई बातें पूछीं।

राजा की बातें सुन कर परागमणि ने आदि से अन्त तक उस मन्दिर के बनाने का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। राजा उसकी बातों को सुन कुछ देर तक चप रह कर बोला कि तुम इस मन्दिर को मुझे दे दो। किन्तु परागमणि राजा के बहुत आग्रह करने पर भी उस मन्दिर को देने पर सहमत नहीं हुआ। जब राजा ने देखा कि यह किसी प्रकार भी मुझे नहीं देगा तब उसने कहा कि "यह मन्दिर मेरे राज्य में है इस लिए मेरा है। इसे तुमने नहीं बनवाया है बल्कि मेरे पूर्व्वजों ने इसका निर्म्माण किया है। यदि तुमने इसे बनवाया है तो इसका प्रमाण दो।"

राजा की इस प्रकार की बातें सुन कर उसने कहा कि

"महाराज ! यदि इस मन्दिर के मेरे द्वारा बनवाये जाने में आप को किसी प्रकार का सन्देह हो तो आप कृपा कर मेरे साथ चलें। मैं शीघ्र ही इसका प्रमाण दे देता हूँ।" राजा पराग-मणि की बातें सुन कर आगे आगे चला। अब परागमणि राजा को उस जलाशय के निकट ले गया जिस के जल से उसने मन्दिर बनवाया था।

इन दोनों को आते देख कर जल के जितने जीव थे सब के सब भाग चले। राजा ने उन सबों को भागते हुए देख कर उन से भागने का कारण पूछा। जलचरों ने उत्तर दिया कि "महाराज ! हम सब आप के डर से नहीं भागते, वरन् आप के पीछे जो वह आदमी आ रहा है उसी के भय से भाग रहे हैं, क्योंकि वह भयङ्कर व्याधा है।" राजा ने पूछा "ऐसा क्यों ?" उन सबों ने उत्तर दिया कि "महाराज ! जिस समय वह इस जङ्गल में मन्दिर बनवाता था उस समय मालूम नहीं जलाशय का बहुत जल भरवा कर उसने कितने जीवों को पानी के बिना मरवा डाला था।" जलचर जीवों की ऐसी बातें सुन कर राजा परागमणि की सत्यता देख उस पर अत्यन्त प्रसन्न हुआ और उसे धर्म्मात्मा कह कर वहां से अपने नगर को चला गया।

प्रश्न—धर्म्मात्मा किसे कहते हैं ?

,,—राजा परागमणि पर क्यों प्रसन्न हुआ था ?

व्याकरण—सत्यता, लड़कपन, बुढ़ापा और बहादुरी ये ऐसे शब्द हैं जिन से किसी वस्तु के धर्म्म, स्वभाव या गुण का बोध होता है। इसलिए ऐसे शब्दों को भाव-वाचक संज्ञा कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से भाव-वाचक संज्ञाए चुनो।

कबूतर

राजि रहे हैं=शोभा देते हैं या लीन हो रहे हैं। अतिशय=बहुत। दृग-पथ=आँखों का रास्ता। मंजु=सुन्दर, मनोहर। लग मैं=पास में। परेवा=कबूतर।

लखहु कबूतर की सोभा किमि सुभग लखाती।
घुटुकि घुटुकि कै चुगत रुचिर दाना करि पाँती॥
झमकि झमकि कै चलत कबहुँ कबहुँक ठठकाये।
कबहुँ फुरहुरि लेइ लसत पाँखन फरकाये॥

पैंजनि कबहुँ बजाइ जमकि कै नाचि रहे हैं।
आधे नैन झपाइ अजब रङ्ग राचि रहे हैं॥
कबहुँक ग्रीव उठाइ लखत मद ऐंठि रहे हैं।
कबहुँक छितिहिं अलिंगत से जनु बैठि रहे हैं॥

निज कुटुम्ब सङ्ग रहत देखि इन को सब मोहत।
कबहुँक उड़ि छतरी में बैठ औरहुँ मोहत॥
कबहुँक चक्कर बाँधि उड़त हैं जात गगन में।
अतिशय ऊँचो जाइ संक उपजावत मन में॥

घन सों ऊँचो जाइ होत दृग-पथ सों न्यारो।
कुन्द कली से देखि परत कबहूँ अति प्यारो॥
गिरह खाइ दै चक्कर आवत भूमि मँझारी।
निज स्वामी की चीन्हि लेत बारी फुलवारी॥

॥ कवित्त ॥

छोटे छोटे बँगले बनावें तेरे रहिबे को,
विघन न कोऊ ऐबे देत तेरे मग मैं।
आओ आओ बेटा कहि भाखें मृदु भाषनि ते,
दाना पानी मंजु डारि देत पुनि लग मैं॥
ऊँची ऊँची छतरी बनाय तेरे बैठिबे को,
उड़िबो सिखावैं अरु राखैं जिन संग मैं।
सेवा कर तेरी जग मेवा खाने वारे जन,
सुखी है परेवा! तो सो और कौन जग मैं॥

—पं० अम्बिकादत्त व्यास।

प्रश्न—कबूतर को लोग क्यों पालते हैं?
,,—इसकी शोभा का कुछ वर्णन करो?

व्याकरण—लड़का, राजा, घोड़ा और बैल इन संज्ञा शब्दों से नर या पुरुष-जाति का बोध होता है। इसलिए ये पुलिङ्ग शब्द कहलाते हैं। और लड़की, रानी, घोड़ी और गाय इन संज्ञा शब्दों से मादा या स्त्री-जाति का बोध होता है। इसलिए ये स्त्रीलिङ्ग शब्द कहलाते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से पाँच पुलिङ्ग और पाँच स्त्रीलिङ्ग संज्ञाएँ चुनो।

गिलहरी



व्यतीत = बिताना। एकत्रित = इकट्ठा।

गिलहरी का शरीर प्रायः नव इञ्च लम्बा होता है। इसका सर अण्डाकार होता है। इसके सम्पूर्ण शरीर पर कोमल तथा भूरे रङ्ग के बाल होते हैं। इसकी पूँछ प्रायः ६ इञ्च लम्बी होती है। इसके कान इस प्रकार बने हुए होते हैं कि यह धीमे शब्द को भी शीघ्रता से सुन सकती है।

गिलहरी अपना घोंसला नीचे नहीं बनाती वरन् ऊँचे ऊँचे वृक्षों पर बनाती है। इसके रहने का स्थान यथार्थ में तो जङ्गल ही है किन्तु यह वृक्षों पर भी रहती है। यह पृथ्वी पर कदाचित् ही उतरती है। और जब

उतरती है तब अपनी चञ्चलता के कारण थोड़ी देर भी कहीं विश्राम नहीं लेती। यह पत्तियों में छिपी रहती है और अपने पैरों के बल से बैठती है। जब इसे कभी किसी प्रकार का खटका जान पड़ता है तब यह फुर्ती से एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर दौड़.या कूद कर चली जाती है। बहुत सी गिलहरियां ऊँचे ऊँचे मकानों के खोंढरों में भो अपने घोंसले बनाती हैं।

गिलहरी अपने समय को केवल खेल में ही नहीं बिताती बल्कि भविष्यत् के लिए भी परिश्रम कर भोजन का सामान सञ्चय करता रहती है। यह अपने जाड़े के भोजन को ग्रीष्म ऋतु में ही जुगा कर रख लेती है। यह अपना भोजन एक ही स्थान में नहीं वरन् भिन्न भिन्न स्थानों में रखती है।

गिलहरी जब किसी पदार्थ को खाने लगती है तब वह दृश्य देखने योग्य हो जाता है। यह अपने फलादि भोजन को अगले दोनों पैरों से पकड़ कर खाती है। गिलहरी का एक विचित्र स्वभाव यह है कि जाड़े के दिनों में यह खूब] सोती है; यहाँ तक कि साँस लेना भी बन्द कर देतो है परन्तु मरती नहीं। जब इसे भूख सताने लगती है तब उठती है और एकत्रित भोजन के भाण्डार में से खा कर पुनः सो जाती है।

बहुत से लोग इसे बड़ा उपद्रवी बताते हैं क्योंकि यह खेतों के अन्न और छोटे छोटे पौधों को नष्ट कर देती है। यद्यपि इसके इस कार्य्य से बुराइयाँ होती हैं तथापि गिलहरी से कई लाभ

भी होते हैं। इससे एक लाभ तो यह होता है कि इसके चमड़े से दस्ताना बनता है और अच्छे अच्छे वस्त्र भी विभूषित किये जाते हैं। और बहुत से लोग इसकी खाल में कुछ भर कर गृह में शोभा के लिए यत्र तत्र रख दिया करते हैं।

प्रश्न—गिलहरी एक स्थान पर देर तक क्यों नहीं रहती ?

व्याकरण—गिलहरी, गाय, लड़का और पुस्तक इन संज्ञा-शब्दों में से हर एक से एक एक का बोध होता है—इसलिए ये एक वचन हैं। और गिलहरियों, गायें, लड़के और पुस्तकें कहने से एक से अधिक का बोध होता है इसलिए ये बहु वचन हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से दस बहु वचन और पाँच एक वचन संज्ञाए चुनो।

पण्डित अम्बिकादत्त व्यास



अवकाश = छुट्टी।

पण्डित अम्बिकादत्त व्यास का जन्म संवत् १९१५ चैत्र शुक्ल ८ को जयपुर के पास धूला नामक गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम पण्डित दुर्गादत्त था। इनके माता-पिता दोनों ही शिक्षित थे। इनकी शिक्षा पाँच ही वर्ष की अवस्था से आरम्भ हुई थी। इनकी बुद्धि की प्रखरता देख कर इन्हें एक ही प्रकार की नहीं वरन् कई प्रकार की शिक्षाएँ दी जाती थीं। ये अपने परिश्रम से थोड़े ही

दिनों में संस्कृत भाषा में बातचीत करने लग गये थे। दस को अवस्था से हो ये हिन्दी भाषा में कविता करने लगे। परन्तु उस समय जो कोई इनकी बनायी हुई कविता सुनता था तो वह यही कहता था कि "यह इनकी बनायी हुई नहीं है वरन् इन्हों ने अपने पिता से बनवायी है।" ऐसी बातें सुन कर ये कुछ चिन्तित भी हो जाते थे। किन्तु इनके पिता इन्हें कभी भी हताश नहीं होने देते थे।

व्यासजी की अच्छे अच्छे विद्वानों से संगति रहती थी। अच्छी संगति रहने ही के कारण ये अति शीघ्र अन्यान्य विषयों में उन्नति कर गये थे। ये ऐसी कविता करते थे कि उसे देख कर लोगों को आश्चर्य्य में पड़ जाना पड़ता था। ये समस्या-पूर्त्ति करने में अद्वितीय थे।

जब कहीं किसी उत्सव में बड़े बड़े विद्वान् एकत्रित होते थे तब व्यासजी भी वहाँ पर अवश्य बुलाये जाते थे। एक समय काशी में एक बड़ी सभा हुई थी। उस में ये भी गये थे। उस सभा में इन्हों ने बाबू हरिश्चन्द्र की दी हुई समस्या की ऐसी योग्यता से पूर्त्ति की थी कि सब लोगों को दङ्ग रह जाना पड़ा था।

इसी प्रकार ये बड़ी बड़ी सभाओं में निमन्त्रित किये जाते थे और अपनी योग्यता से सब किसी को आश्चर्य्य में डाल देते थे। यही देख कर विद्वानों ने इन्हें "सुकवि" की पदवी दी थी।

कुछ दिनों तक इन्हों ने काशी के क्वीन्स-कालेज में

विद्याध्ययन किया। वहाँ परीक्षोत्तीण होने पर इन्हें "साहित्याचार्य्य" की उपाधि मिली। ये अंग्रेज़ी भी अच्छो जानते थे।

संवत् १९२१ में इनकी माता तथा १९३७ में इनके पूज्य पिता का सर्गवास हो गया। जब इनके माता-पिता मर गये तब सारा सांसारिक भार इन्हीं के सर पर आ पड़ा। यद्यपि अब इनके ऊपर गृह सम्बन्धी कई झंझट आ गये तथापि इन्हों ने विद्योपार्ज्जन के लिए परिश्रम करना नहीं छोड़ा। श्लोक इत्यादि बनाना इन के लिए बड़ी सुगम बात थो। ये चौबीस मिनट में १०० श्लोक बना डालते थे। इनकी इस प्रकार की बद्धि का चमत्कार देख कर इन्हें कई विद्धानों ने कई स्वर्णपदक भी दिये थे। एक ही समय में कई प्रश्नों का उत्तर देना इनके लिए साधारण बात थी।

संवत् :१९४० में इनकी बद्धि की तीक्ष्णता देख कर एक प्रिन्सपल ने इन्हें संस्कृत का अध्यापक बना दिया। वहाँ इन्हां ने बड़ी योग्यता के साथ कार्य्य कया। कुछ दिनों के बाद ये भागलपुर ज़िला-स्कूल में हेडपण्डित के पद पर नियुक्त किये गये। इसके थोड़े ही दिनों के बाद ये छपरा ज़िला-स्कूल में भेज दिये गये। वहाँ भी इन्हों ने कई वर्ष तक कार्य्य किया। इन्हों ने अनेक स्थानों में जाकर भ्रमण भी किया था। व्यासजा ने कई अच्छी अच्छी पुस्तकों की रचना का हैं जिनमें बिहारी-बिहार, गद्यकाव्य-

मीमांसा, साहित्य-नवनीत, आश्चर्य्य-वृत्तान्त, अवतार-मीमांसा और सुकवि-सतसई आदि हिन्दी तथा शिवराज-विजय और सामवत नाटक आदि संस्कृत के ग्रन्थ अति उत्तम हैं।

बिहार में संस्कृत भाषा की समुचित उन्नति का कोई प्रबन्ध न देख कर इन्होंने ही "बिहार-संस्कृत-संजीवन समाज" स्थापित किया था जिसके द्वारा संस्कृत पढ़नेवाले छात्रों की परीक्षा ली जाती और छात्रवृत्ति दी जाती थी। अब यह कार्य्य बिहार-सरकार की नव स्थापित "संस्कृत-परीक्षा समिति" कर रही है।

प्रश्न—पदक किसे कहते हैं ?

,,—दो ऐसे वाक्य बनाओ जिन में संसार शब्द का प्रयोग हो।

,,—समस्या-पूर्त्ति किसे कहते हैं ?

व्याकरण—"गुरु ने शिष्य को पढ़ाया" इस वाक्य में गुरु और शिष्य संज्ञा शब्द हैं जिसका "पढ़ाया" क्रिया के साथ कुछ न कुछ सम्बन्ध है। गुरु पढ़ाने के काम का करने वाला है और शिष्य पर पढ़ाने का फल पड़ता है इसलिए गुरु कर्त्ता कारक और शिष्य कर्म कारक है।

क्रिया के करने वाले को कर्त्ता और जिस पर क्रिया का फल पड़े उसे कर्म कारक कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के किसी पाँच वाक्य में कर्ता और कर्मकारक बतलाओ।

गिरिधर की कुण्डलियां

परतीती = विश्वास। लोन = नमक।

बीती ताहि बिसार दे आगे की सुधि लेय।
जो बनि आवै सहज में ताही में चित देय॥
ताही में चित देय बात जोई बनि आवै।
दुरजन हँसै न कोय चित्त में खेद न पावै॥
कह गिरधर कविराय यहै कर मन परतीती।
आगे को सुख होय समुझ बीती सो बीती॥ १॥

हीरा अपनो खान को मन ही मन पछिताय।
गुन कीमत जानो नहीं तहाँ बिकान्यौ आय॥
तहाँ बिकान्यौ आय छेद करहा सों बाँध्यौ।
मीठो लगे न माँस लोन बिन फूहर राँध्यौ॥
कह गिरधर कवि राय धरैं कैसे क धीरा।
गुन कीमत घटि गई यहै कहि रोयो हीरा॥ २॥

भौंरा ये दिन कठिन हैं दुख सुख सहे शरीर।
जब लग फुलै न केतकी तब लग बिलम करील॥
तब लग बिलम करील हर्ष मन सोच न कीजै।
जैसी बहै बयारि पीठ तब तैसी दीजै॥
कह गिरधर कविराय होय जनि जिय में बौरा।
सहै दुःख अरु सुःख एक सज्जन अरु भौंरा॥ ३॥

प्रश्न—परतीती का शुद्ध शब्द क्या है ?

,,—पहली कुण्डलिया से क्या शिक्षा मिलती है ?

व्याकरण—"यह छड़ी से मारता है" इस वाक्य में मारने की क्रिया छड़ी के द्वारा की जाती है। इसलिए छड़ी को करण कारक कहते हैं।

"राम ने रावण को सीता के लिए मारा" इस वाक्य में मारने की क्रिया सीता के लिए की गयी है। इसलिए सीता सम्प्रदान कारक है।

अभ्यास—इन में करण और सम्प्रदान कारक बताओ। "वह कलम से लिखता है। राम ने श्याम के लिए एक घोड़ा लिया। वह कान से सुनता है।"

सत्य हरिश्चन्द्र

(श्मशान का दृश्य)

कीर्त्ति = यश। श्मशान = मरघट। ध्वनि = शब्द।

प्राचीन काल के सत्यवादी राजाओं में राजा हरिश्चन्द्र भी एक बड़े नामी राजा हो गये हैं, जिनकी कीर्त्ति आज तक सारे संसार में विख्यात है।

जब इनकी सत्यवादिता की प्रशंसा और इनकी कीर्त्ति चारों ओर फैली हुई थी उसी समय इनके सत्य की परीक्षा करने के लिए विश्वामित्र ने इन्हें बहुत दुःख दिया था। इस परीक्षा में हरिश्चन्द्र की स्त्री शैव्या, पुत्र रोहिताश्व और स्वयं हरिश्चन्द्र को भी एक चाण्डाल के घर बिकना पड़ा था। पर इतने पर भी विश्वामित्र को शान्ति नहीं मिली थी। महाराजा हरिश्चन्द्र नाना प्रकार की विपत्तियाँ सहन करने पर भी अपने सत्य-पथ से विचलित नहीं हुए थे।

वाह रे महात्मा हरिश्चन्द्र! तुम्हारे सिवा और कौन उस कठिन परीक्षा में स्थिर रह सकता था। आजकल लोग तुच्छ सी तुच्छ बात की जाँच में भी अपने कर्त्तव्यों को परित्याग कर सुकर्म्मों से अलग हो जाते हैं।

देखो, जब विश्वामित्र किसी प्रकार भी हरिश्चन्द्र को अपने सत्य से डिगा नहीं सके तब उन्हों ने सांप का रूप धारण कर उनके प्रिय पुत्र रोहित को एक फुलवारी में जा डँसा।

जब रोहित के मरने का समाचार उनकी स्त्री शैब्या को मिला तब वह मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ी और "हा पुत्र रोहित ! हा पुत्र रोहित !!" कह कर विलाप करने लगी। उस समय शैब्या का रुदन सुन कर सब के हृदयों में करुणा का जो सञ्चार हुआ था उसका वर्णन करना महाकठिन है। पर इसी घोर विपत्ति के आने पर भी वह धैर्य्यमूर्त्ति शैब्या अपने मृतक पुत्र को ले, दाह कर्म करने के लिए श्मशान-भूमि में जा पहुँची, जहाँ महाराजा हरिश्चन्द्र अपने चाण्डाल-राजा की सेवकाई करने के लिए कन्धे पर लट्ठ धर कर इधर-उधर घूम रहे थे। जब शैव्या रोती हुई अपने पुत्र की चिता बना उसका अग्नि-संस्कार करने ही पर थी कि धर्म्मात्मा सत्यव्रतधारी हरिश्चन्द्र कन्धे पर लट्ठ लिए और शरीर पर फटा वस्त्र धारण किये आगे बढ़ कर उस स्त्री के पास पहुँचे और बोले कि बिना आधा कफ़न दिये इस घाट पर कोई अग्नि-संस्कार नहीं कर सकता है।

स्त्री उस स्वर से अपने पति को पहचान कर करुण स्वर से बोली ; "नाथ, मेरे पहनने के इस वस्त्र के सिवा इस समय मेरे पास और कुछ नहीं है। यह आप ही का प्रियपुत्र "रोहित" है और मैं आप ही की धर्म्मपत्नी "शैव्या" हूँ। इन बातों को सुन कर हरिश्चन्द्र के हृदय में बड़ा दुःख हुआ। पर दुःख के समय अपना कर्त्तव्य त्यागना अधर्म्म समझ कर उन्हों ने कहा कि "हे रानी ! यह सब हम लोगों के पूर्व्व जन्म के कर्मों का फल है। अब लाखों यत्न करने पर भी पुत्र रोहित लौट नहीं



श्मशान-भूमि में राजा हरिश्चन्द्र।

सकता। फिर व्यर्थ धर्म्म त्यागना नितान्त अनुचित है। हम लोगों के ऊपर भारी से भारी सङ्कट आया पर तौभी हम अपने सत्य से नहीं डिगे।

अब मैं छोटी सी बात के लिए कदापि अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं होऊँगा। तुम आधा कफ़न मुझे दो और अग्नि संस्कार कर लौट जाओ।"

स्त्री अपने पति के ऐसे निष्ठुर वचनों को सुन कर रोने लगी पर महात्मा हरिश्चन्द्र इस पर कुछ भी ध्यान न दे कर बारम्बार कफ़न माँगते ही रहे।

राजा हरिश्चन्द्र के ऐसे सत्यव्रत पालन को देख कर चारों ओर से जय जय कार की ध्वनि आने लगी। पृथ्वी काँपने लगी और आकाशवाणी हुई "धन्य राजा हरिश्चन्द्र! तुम्हारे बिना सत्य का ऐसा प्रतिपालन और कौन कर सकता है।"

जब शैव्या ने देखा कि किसी प्रकार मेरे पति अपने सत्य-धर्म्म से नहीं डिगते तब वह कफ़न के बदले अपनी आधी साड़ी फाड़ राजा को देने पर तत्पर हुई। उस समय उनकी यह दशा देख परमात्मा का आसन डिगा और अपने भक्त का उद्धार करने के लिए आ प्रकट हुए और बोले कि "पुत्र हरिश्चन्द्र! तुम धन्य हो। जो तुम्हारी इच्छा हो माँगो, मैं देता हूँ।" हरिश्चन्द्र ने परब्रह्म परमेश्वर को देख अपने जन्म को धन्य समझा और कहा कि ; तुम्हारे बिना हम दीनों की सुधि लेने वाला कौन है। मुझे किसी बात की इच्छा नहीं है। मेरा बड़ा भाग्य है कि आपका दर्शन हुआ। इस से

अधिक और क्या चाहिये। जिस के लिए ऋषि, मुनि, योग साधन करते करते अन्तावस्था को प्राप्त हो जाते हैं तो भी आप के दर्शन नहीं होते वह आप स्वयं ही मेरे सामने उपस्थित हैं।"

परमात्मा ने हरिश्चन्द्र की ऐसी ज्ञान भरी बातें सुन रोहित को जीवित कर उसे अखण्ड पृथ्वी के राजा होने का वर दिया। दूसरी ओर से विश्वामित्र भी आकर बोले कि "पुत्र हरिश्चन्द्र तुम धन्य हो। मैं ने केवल तुम्हारी परीक्षा करने के लिए तुझे ऐसा दुःख दिया था।"

अन्त में हरिश्चन्द्र बहुत दिनों तक राज्य कर अपनी सारी प्रजा के साथ अपने नश्वर शरीर को त्याग कर स्वर्गधाम को सिधारे।

प्रश्न—इस कहानी के पढ़ने से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

,, —रोहित की मृत्यु का कारण बताओ।

व्याकरण—"पेड़ से पत्ती गिरती है" इस में गिरना क्रिया पेड़ से पत्ती का अलगाव प्रगट करती है। इसलिए पेड़ अपादान कारक है। इसी प्रकार "वह घर से बाहर निकला" "कूएं से जल खींचो" इन वाक्यों में घर और कूआँ अपादान कारक हैं।

"राजा का घोड़ा" इस में राजा का घोड़े से कोई सम्बन्ध या अधिकार जाना जाता है। इसलिए राजा सम्बन्ध कारक है। इसी प्रकार "राम की लेखनी" "मोहन के घोड़े" इन में राम और मोहन सम्बन्ध कारक हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से दस अपादान और दस सम्बन्ध कारक के उदाहरण दो।

सच्ची माता, सच्चा पिता और सच्चा पुत्र

पिता-पुत्र का युद्ध

(महाभारत के समय का एक सुन्दर दृश्य)

पतित = पापी, नीच। शूरमा = वीर, योधा।

वीर अर्जुन अपने बड़े भाई युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के घोड़े को अपने साथ लेकर दिग्विजय के लिए निकला और जिस किसी ने उस घोड़े को रोका उसको परास्त किया। इस प्रकार अनेक राजाओं को अपने अधीन कर के वह युधिष्ठिर के यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए उन्हें भेजता गया।

घोड़े के पीछे पीछे अर्जुन जब मणिपुर (आसाम) में पहुँचा तो वहाँ का राजा बभ्रुवाहन उस से मिलने के लिए आया। यह अर्जुन का पुत्र था। वनवास के समय अर्जुन ने मणिपुर के नागराज की कन्या से विवाह किया था। विवाह के समय यह प्रतिज्ञा हुई थी कि अर्जुन की सन्तान मणिपुर में ही रहेगी। इसीलिए राजकुमारी उलूपी उसके साथ नहीं गयी थी। मणिपुर में अर्जुन ने एक और राजकुमारी के साथ विवाह किया था। जिस का नाम चित्राङ्गदा था। ये दोनों राजकुमारियाँ एक साथ एक ही महल में रहती थीं। बभ्रुवाहन इसी राजकुमारी चित्राङ्गदा के गर्भ से उत्पन्न हुआ था।

बभ्रुवाहन अपने साथ कुछ भेंट लेकर अर्जुन से मिलने के लिए आया। उसने पहले अर्जुन को कभी नहीं देखा था। केवल

उसने उसकी प्रशंसा सुनी थी। उसकी विमाता उलूपी प्रायः अर्जुन की वीरता का वृत्तान्त उसको सुनाया करती थी और वह अपने पिता की प्रशंसा सुन कर लालायित होता था कि "वह दिन कब आवेगा जब मैं अपने पिता का दर्शन करूंगा।"

अर्जुन का आगमन सुन कर नवयुवक राजा बड़े प्रेम और उत्साह के साथ उस से मिलने के लिए गया। वह जानता था कि मेरे पिता मुझे देख कर बहुत प्रसन्न होंगे। उसने अर्जन के पास पहुँच कर भट अर्पण की और नम्रतापूर्वक नमस्कार किया। परन्तु परिणाम उलटा निकला। अर्जुन प्रसन्न होने के बदले बेटे की इस क्रिया से आगबबूला हो गया और उसने गरज कर कहा "रे अज्ञानी बालक! यह क्षत्रियों का कर्त्तव्य नहीं। तू तो क्षत्रिय धर्म्म से गिर गया। इस समय मैं तेरे पास पिता के रूप में नहीं आया हूँ वरन् अपने राजा के घोड़े का रक्षक बन कर आया हूँ और तेरे राज्य में शत्रु की तरह प्रविष्ट हुआ हूँ। तुझे चाहिये था कि तू मेरे साथ युद्ध करता। धिक्कार है तेरे जीने पर; तूने क्षत्रिय धर्म्म छोड़ दिया। यह काम वीरों का नहीं वरन् कायरों का है। यदि मेरे हाथ में धनुषबान न होते, मेरे कमर में खून की प्यासी तलवार न लटकती होती, मेरे शरीर पर सन्नाह न होता तो निःसन्देह मैं तेरे इस व्यवहार से प्रसन्न होता। पर तू जानता है कि मेरी इच्छा क्या है? मैं किस लिए बाहर निकला हूँ। रे अज्ञानी! तू मनुष्यों में महा पतित है।"

उस नवयुवक राजकुमार के हृदय पर इन शब्दों से महा आघात पहुँचा। वह गर्दन झुकाये हुए चुप चाप सुनता रहा। यह समाचार तुरत उलूपी तक पहुँच गया कि अर्जन ने राजकुमार को कड़े कड़े शब्द कहे हैं। वह तत्काल उस स्थान पर आयी जहाँ उदास राजकुमार खड़ा था और अर्जुन उसे धिक्कार रहा था। उलूपी महा रूपवती थी और उस समय पुत्र का अपमान सुन कर क्रोध के मारे उसका रूप और भी दमकने लगा। देखनेवालों को प्रतीत होता था कि कोई रूप की देवी है जो बहादुर शूरमाओं का युद्ध देखने के लिए आयी है। उसने पहुँचते ही बभ्रवाहन से कहा "पुत्र! सोचता क्या है? अर्जुन के साथ इसी समय युद्ध कर। मैं अपने पुत्र की इस प्रकार की मानहानि को किस प्रकार सह सकती हूँ। क्षत्रिय ललकारे जाने पर मौत का सामना करने के लिए भी तैयार हो जाता है। तू अर्जन को दिखा दे कि तू सच्चा क्षत्रिय है। इस में सन्देह नहीं कि अर्जन बड़ा शूरमा और युद्ध-विद्या-विशारद है परन्तु क्षत्रिय कभी शत्रु के भय से भयभीत नहीं होता। तू मेरी आज्ञा से अपने पिता के साथ युद्ध कर।"

माता के इन शब्दों ने जलती हुई आग पर आहुति का काम किया। बभ्रवाहन ने अपने शस्त्र सम्हाल लिए और तब वह अर्जुन के सामने आया। अर्जुन का मन प्रसन्न हुआ कि यह भी अभिमन्यु का भाई है। बाप बेटे में युद्ध होने लगा। दोनों ही सुभट, दोनों ही शूरमा और दोनों ही निडर थे। बभ्रुवाहन की

अवस्था थोड़ी थी और अर्जुन की अवस्था अधिक थी। बभ्रुवाहन ने एक ऐसा बाण मारा कि अर्जुन घायल हो गया। इसपर अर्जुन क्रोधित हो कर बभ्रुवाहन पर बाणों की वर्षा करने लगा। बभ्रुवाहन भी साधारण योद्धा नहीं था। उसने अर्जुन के सब तीरों को क्षण मात्र में काट कर फेंक दिया। तब अर्जुन को और भी क्रोध आया। उसने बभ्रुवाहन की ध्वजा काटने के अतिरिक्त उसके रथ के घोड़े भी मार डाले। अब बभ्रुवाहन पैदल हो गया। उस को भी महा क्रोध आया। उसने ताक कर एक ऐसा बाण मारा कि अर्जुन अपने आप को उस से बचा न सका।

बाण के लगते ही अर्जुन भूमि पर गिर पड़ा। उधर बभ्रुवाहन भी मूर्च्छित हो गया। जब चित्राङ्गदा को यह ख़बर मिली तो वह रोती हुई रणक्षेत्र में आयी। पिता-पुत्र दोनों ही भूमि पर पड़े थे। वह मारे दुःख के शिर पीटने लगी। फिर उलूपी की ओर देख कर उस से कहने लगी "यह तू ने क्या किया? तेरे कारण आज मेरे पति और पुत्र की यह दशा हो गयी। ऐ उलूपी! मुझे पुत्र के मरने का उतना शोक नहीं है जितना इस बात का है कि पुत्र ने पिता के साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया।" इसके पश्चात् चित्राङ्गदा अर्जुन के पास गयी और उसको अचेत देख कर महा विलाप करने लगी। कभी उलूपी को दोषी बताती कि उसने सौतिया डाह से ऐसा करा दिया, कभी श्रीकृष्ण का स्मरण करती कि हे भगवन्! अपने मित्र की सहायता करो; कभी युधिष्ठिर को स्मरण करती

कि तुम्हारे वीर भ्राता की आज यह दशा हो गया। जब अर्जुन किसी प्रकार चतन्य न हुआ तो चित्राङ्गदा ने निराश हो कर सती हो जाने की तैयारी की। उधर बभ्रुवाहन को अब होश हो आया। उसने देखा कि माता, पिता की लाश के साथ जल जाने को तैयार है। वह भी अपने मन में महा दुःखी हुआ और उलूपी से कहने लगा—"हे नागराज की कन्या! यह काम मैंने तेरे कहने से किया है, अब मैं भी उसी स्थान को जाऊँगा जहाँ मेरा पिता गया है। यदि मैं जीवित रहा तो लोग मुझे कहेंगे—देखो यह अपने पिता का हत्यारा जा रहा है, इसलिए मैं शपथ खा कर कहता हूँ कि मैं भी उसके साथ ही प्राणत्याग करूँगा।"

जिस समय वह इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर मरने को तयार हो रहा था, उस समय उलूपी ध्यान के साथ अर्जुन के शव को देख रही थी। उसको विषाक्त बाण लगा था और वह विष के कारण निर्जीव सा हो गया था। उलूपी ने बभ्रुवाहन से कहा "पुत्र! कातर मत हो—शूर वीर कभी धैर्य्य नहीं त्यागते, तू इस विषनाशक गुटिका (ज़हर मोहरा) को अपने पिता के घावों पर लगा दे वह अभी उठ खड़ा हो जायगा। तू क्यों घबराता है; क्षत्रिय में क्षात्र-धर्म्म का होना आवश्यक है। वह अग्नि नहीं है जिस में ऊष्णता न हो, वह जल नहीं है जिस में शीतलता न हो; वह खड्ग नहीं है जिस में धार न हो।" उलूपी के इन शब्दों से बभ्रुवाहन को धैर्य्य हुआ। गुटिका घावों पर लगायी गयी।

अब अर्जुन ने आँखें खोल दीं और वह लोगों से पूछने लगा कि "मैं कहाँ हूँ ? यह रक्त कैसा है ? उलूपी और चित्राङ्गदा यहाँ कहाँ ? हाँ, अब स्मरण हुआ, तू मेरे साथ लड़ रहा था, परन्तु ये रानियाँ यहाँ कैसे आ गयीं।"

उलूपी ने कहा "प्राणनाथ ! तुमने छल से भीष्म का बध किया था। उन्हों ने शिखण्डी को देख कर जब धनुष-बाण हाथ से गिरा दिया तब तुमने उनको मार दिया था। उसी पाप के कारण आज तुम अपने पुत्र के हाथ से मारे गये होते, परन्तु इस विषनाशक गुटिका ने तुम्हारा प्राण बचा लिया जिसको तुम स्वयं मुझ किसी समय दे गये थे।"

नियम पूरा हो चुका था। अब सब के सब बड़े आनन्द और प्रेम से मिले। अर्जुन एक रात के लिए मणिपुर के राजा का अतिथि हुआ और अगले दिन उनसे विदा हो कर फिर घोड़े के पीछे दूसरे दूसरे देशों को चला गया।

तत्त्वदर्शी।

प्रश्न—बभ्रु-वाहन ने क्यों अपने पिता से युद्ध किया ?

,, —अर्जुन किस प्रकार मरने से बच गया ?

व्याकरण—"वह काग़ज़ पर लिखता है" "मोहन घर में सोता है" इन वाक्यों में लिखना और सोना क्रिया के आधार क्रम से काग़ज़ और घर हैं। इस लिए काग़ज़ और घर अधिकरण कारक हैं। ऐ भाई, हे महाराजा, अरे मित्र, इन में किसी को पुकाराना या चेताना पाया जाता है। इसलिए इनको सम्बोधन कारक कहते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से अधिकरण और सम्बोधन कारक के पाँच पाँच उदाहरण दो

महाराणा संग्राम सिंह



आविर्भाव = उत्पत्ति। सम्पादित = पूरा किया हुआ।

भारतवर्ष का प्राचीन इतिहास पढ़ने से मन में कभी कभी नाना प्रकार के उत्साह और शोक का आविर्भाव होने लगता है।

मेवाड़ाधिपति राणा रायमल जब अमर धाम को चले

गये तब उनके राज्य का सम्पूर्ण काम उनकी स्त्री ही करती थी। क्योंकि उस समय महाराणा संग्राम सिंह राज्य संभालने के योग्य नहीं हुए थे। महाराणा संग्राम सिंह बाल्यावस्था से ही अपनी माता के परम भक्त थे। नित्य प्रातःकाल उठते ही उनके चरणों पर गिर कर साष्टाङ्ग दण्डवत् किया करते थे। इस मातृभक्ति के कारण महाराणा का पौरुष और पराक्रम सूर्य्य के सदृश देदीप्यमान होने लगा और थोड़े ही दिनों के पश्चात् आप के चेहरे से राजपूती झलक प्रगट हो कर अपनी प्यारी प्रजा को आनन्द देने लगी। जब आप की अवस्था १८ वष का हुई तब आप राज-सिंहासन पर बैठे। मेवाड़ ऐसी वीर-भूमि की सुधि जब हृदय में आती है तो उस समय हृदय कम्पायमान हो जाता है। जिस समय महाराणा राज-गद्दी पर विराजमान हुए उस समय मेवाड़ का भाग्य चमक रहा था। चारों ओर के शत्रु आप का नाम सुन कर भय-भीत हो जाते थे।

आपने राज-गद्दी पर बैठेते ही बड़े बड़े पठान राजाओं के मान को ध्वंस कर डाला और जिन राज्यों को पठानों ने अपने अधिकार में कर रक्खा था, उन्हें भी आपने अपने अधिकार में कर अपनी दीन प्रजा को सब तरह से आनन्दित किया। जिस समय आप की वीरता और साहस का झण्डा चारों ओर फहरा रहा था उसी समय वीर बाबर आप से युद्ध करने के लिए आया। उस लड़ाई में आपने जो बहादुरी दिखलायी उसका वर्णन करना बहुत कठिन है।

आपने उस लड़ाई में जी खोल कर युद्ध किया। परन्तु अन्त में शत्रु की सेना से आपको पराजित होना पड़ा। यद्यपि आप हार गये तथापि आपके चेहरे मलिनता नहीं प्रगट होती थी। उसी लड़ाई में बाबर ऐसे वीर को अपने कई अवगुण छोड़ने पड़े थे।

महाराणा का चरित्र अत्यन्त विशुद्ध था। ये अपने समय को कभी भी व्यर्थ नहीं व्यतीत करते थे, वरन् सदैव उत्तमोत्तम उपायों को ढूँढ़ा करते थे। महाराणा की बुद्धि बड़ी तीव्र और विलक्षण थी। कोई बात एक बार भी सुन लेने पर वे उसे भूलते नहीं थे। ये जिस कार्य्य में हाथ लगाते उसे कर ही डालते थे। ये बिना प्रयोजन धन व्यय नहीं करते थे और अपने राज्यकोष को अपना समझना नितान्त अनुचित समझते थे।

महाराणा संग्राम सिंह में सब से बड़ा गुण यह था कि ये दीन दुःखियों की बड़ी सहायता किया करते तथा विद्वानों का आदर-सत्कार करना भली भाँति जानते थे। किसी की निन्दा वा अपमान सुनना एकदम नहीं चाहते थे। जिस काम को करना चाहते उसे खूब छान-बीन कर करते थे। इन्हीं सब गुणों के कारण आप की प्रशंसा चारों ओर फैल गयी थी।

आप ने नीति पूर्वक १८ वर्ष तक राज्य किया था। अपनी प्रजा का भलाई के लिए आपको १८ बार लड़ाई में जाना पड़ा था। उन्हें आनन्द पूर्वक रखना तथा कभी भी

औरों की पराधीनता नहीं स्वीकार करना आप का मुख्य उद्देश्य था। आपने अपने नौकरों को कई जागीरें दी थीं। आप के चार पुत्र थे उन में सब से बड़े का नाम जगत् सिंह था। आप के मरने पर जगत् सिंह ही गद्दी पर विराजमान हुए।

प्रश्न—संग्राम शब्द का क्या अर्थ है?

व्याकरण—"गायें खेत में चर रही हैं" इस में गायें और खेत संज्ञा शब्द हैं। इन का पद-परिचय नीचे बनाये ढंग से करना चहिये।

गायें—जातिवाचक संज्ञा, स्त्रीलिंग, बहुवचन, कर्त्ता कारक और "चर रही हैं" क्रिया का कर्त्ता।

खेत—जातिवाचक संज्ञा, पुंलिङ्ग, एकवचन, अधिकरण कारक और "चर रही है" क्रिया का आधार।

अभ्यास—ऊपर के पाठ के किसी दो वाक्यों की संज्ञाओं के पद-परिचय करो।

वृन्द कवि के दोहे

जलधर = बादल। शुक = तोता। ज्योति = चमक। ससि=चन्द्रमा।

मान होत है गुननते, गुन बिन मान न होय।
शुक सारी राखै सब, काग न राखै कोय॥ १॥
एक भलो सब को भलौ, देखो सबद विवेक।
जैसे सत हरिचन्द के, उधरे जीव अनेक॥ २॥

जाको जैसी उचित तिहि, करिये सोइ बिचारि।
गीदड़ कैसे लाइ हैं, गजमुक्ता गज मारि॥ ३॥
जो सब ही को देत है, दाता कहिये सोय।
जलधर बरसत सम विषम, थल न बिचारत कोय॥ ४॥
बात कहन की रीति में, है अन्तर अधिकाय।
एक बचन ते रिष बढ़ै, एक बचन ते जाय॥ ५॥
एक वस्तु गुन होत है, भिन्न प्रकृति के भाय।
भंटा एक को पित करत, करत एक को बाय॥ ६॥
सुख बीते दुख होत है, दुख बीते सुख होत।
दिवस गये ज्यों होत निसि, निसि गत दिवस उदोत॥७॥
दोष भरी न उचारिये, यदपि जथारत बात।
कहे अंध को आँधरौ, मानि बुरो सतरात॥ ८॥
पर घर कबहुँ न जाइये, गये घटत है जोति।
रवि मण्डल में जात ससि, छीन कला छबि होति॥ ९॥

प्रश्न—वृन्द कवि किस लिए प्रसिद्ध हैं?

व्याकरण—(१) मैं खाता हूँ—हम खाते हैं।
(२) तू खाता है—तुम खाते हो।
(३) वह खाता है—वे खाते हैं।

इन में मैं और हम बातचीत करनेवाले को प्रगट करते हैं। तू और तुम जिससे बातचीत की जाती है उसे प्रगट करते हैं और वह और वे जिसके बारे में बातचीत की जाती है उसे प्रगट करते हैं। इसलिए मैं और हम को उत्तम पुरुष, तू और तुम को मध्यम पुरुष और वह और वे को अन्य पुरुष कहते हैं और इन छहों को पुरुषवाची सर्वनाम कहते हैं।

अभ्यास—इन में उत्तम मध्यम और अन्य पुरुष सर्वनाम बताओ :—
(१) मैं बीमार हूँ पर मेरा भाई महेश अच्छा है। (२) वह दिन भर काम करता है? (३) तुम कैसे हो। (४) तुम्हारी आमदनी क्या है?

राबिन्सन् क्रूसो

बाल्यावस्था = लड़कपन। निषेध = रोकना, मना करना।
आत्मघात = अपने को मारना। स्वतन्त्र = स्वाधीन, अपने ही वश में।

राबिन्सन् क्रूसो का जन्म यार्क नगर में सन् १६३२ ईस्वी में हुआ था। इसका पिता साधारण स्थिति का एक पढ़ा लिखा व्यक्ति था। इसके पिता के तीन पुत्र थे, जिनमें सब से छोटा यही था। इसने किसी स्कूल में विद्या का अध्ययन नहीं किया था वरन् इसने अपने घर ही में कुछ पढ़ा था। बाल्यावस्था में यह अपने माता-पिता का अत्यन्त प्रिय पुत्र था। इसके पिता की बुद्धिमानी के कारण इसे पढ़ने में विशेष सुविधा हुई थी।

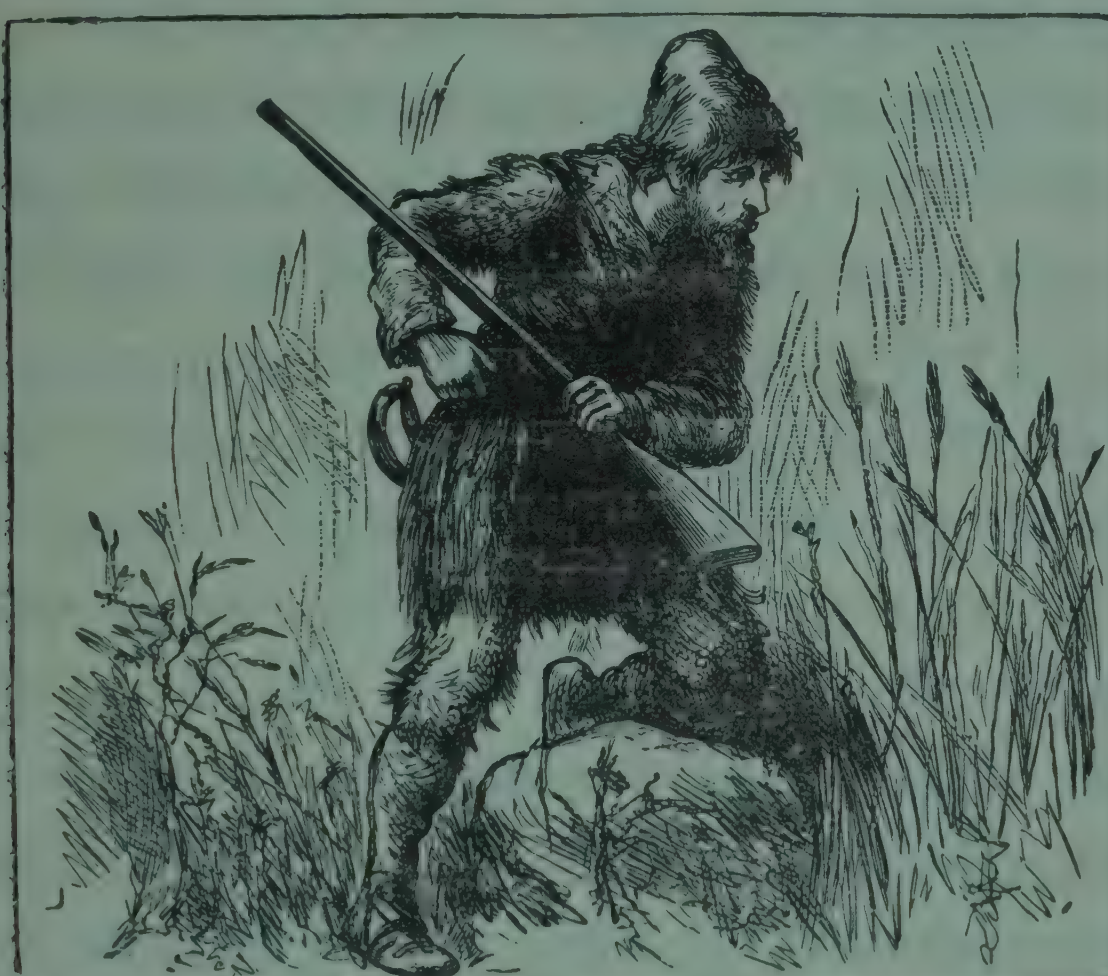
यद्यपि राबिन्सन् क्रूसो अपने माता-पिता का अत्यन्त प्रिय पुत्र था तथापि वह अपने गृह में रहना नहीं चाहता था। बराबर उसको यही इच्छा रहती थी कि मैं भी अपने पिता की भाँति परदेश जाया करूँ किन्तु स्वतन्त्र नहीं रहने के कारण उसकी इच्छा पूरी नहीं होती थी।

राबिन्सन् का पिता उसके परदेश जाने का अभिप्राय समझ कर बहुत चिन्तित रहता था। वह कभी कभी उसे एकान्त में बुला कर समझाया भी करता था परन्तु राबिन्सन् अपने पिता की बातों को तभी तक मानता था जब तक वह उसके सामने रहता था। एक समय जब राबिन्सन् का पिता अत्यन्त रोगग्रसित हुआ तब उसने अपने पुत्र को बुला कर, विदेश यात्रा के गुणों और दोषों का वर्णन कर उसे परदेश जाने से निषेध किया, किन्तु राबिन्सन् ने अपने पिता की बातों की ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। उसका पिता अपने पुत्र का ऐसा उलटा आचरण देख कर अत्यन्त दुखी रहता और अपने मन में नाना प्रकार की बातों का सोच किया करता था।

एक दिन राबिन्सन अपने माता-पिता की बातों का सर्वथा उल्लङ्घन कर अपने एक साथी के साथ परदेश के लिए चला पड़ा। कुछ दिनों तक इधर उधर घूमने के पश्चात् वह एक जहाज़ में नौकर हुआ और अपने काम को उसने इस प्रकार सम्पादित किया कि थोड़े ही दिनों में अपने स्वामी का प्रियपात्र बन गया।

कुछ दिनों तक काम करने के पश्चात् राबिन्सन् और जहाज़ के कप्तान में किसी कारणवश अनबन हो गयी। दोनों के हृदय में एक दूसरे की बुराई करने के चिह्न दिखायी देने लगे। उन दोनों में इतनी शत्रुता बढ़ गयी कि वे दोनों अब एक जहाज़ पर रहना उचित नहीं समझने लगे।

एक दिन किसी विकट समुद्रमार्ग से देशावर के लिए जहाज़ खोला गया। संयोगवश राबिन्सन् और कप्तान दोनों ही उस जहाज़ पर थे। वह जहाज़ कई दिनों तक बिना किसी स्थान पर ठहरे चलता रहा जिस से जहाज़ के सभी लोगों में उदासी छा गयी। थोड़ी देर पीछे



राबिन्सन् क्रूसो का जौ और धान का खेत।

समुद्र में एक टापू दिखायी पड़ा। कप्तान ने फुर्ती से उसी ओर जहाज़ घुमाया और जहाज़ टापू में जा लगा। कुछ देर विश्राम करने पर कप्तान छल द्वारा राबिन्सन् को उसी टापू में छोड़ आप जहाज़ खोल कर वहाँ से चलता बना।

अब राबिन्सन् अपनी दुरावस्था और अपने समय का फेर

विचार कर बहुत शोक करने लगा कि मैं इस सुनसान एवं निर्जन स्थान में किसका आश्रय लूँ। अब मेरा प्राण व्यर्थ हो गया। मैंने बड़ा ही बुरा काम किया कि अपने माता-पिता की आज्ञा को नहीं माना। इसी प्रकार उसके मन में नाना प्रकार की तर्कनाएँ उठने लगीं। कभो कभी तो वह सोचता कि मैं आत्मघात कर लू क्योंकि अब मेरा जीना व्यर्थ है।

इसी प्रकार सोच करता हुआ वह उस टापू में अपना जीवन व्यतीत करने लगा। उसके पास जो कुछ खाने की सामग्री थी उसने सब को समाप्त कर डाला। पोछे जब भोजन घट गया तब उसने उस टापू के रहनेवालों और सामुद्रिक जीवों को मार मार कर खाना आरम्भ किया। राबिन्सन् ने अपनी बुद्धिमानी तथा साहस के बल से उस टापू पर अन्नादि भी उत्पन्न करना शुरू कर दिया था। जब तक वह अपने कामों में लगा रहता तब तक उसको सब चिन्ताएँ दूर रहती थीं पर जब वह उन सबों से अलग होता था तो उसके दुःखों की सीमा नहीं रहती थी। इस तरह जब कुछ समय तक उसने उस टापू में दुख झेल लिया तब एक दिन उसी टापू से हो कर आनेवाले एक जहाज़ पर सवार हो कर वह अपने घर को लौट आया।

प्रश्न—राबिन्सन् को क्यों इस तरह कष्ट उठाना पड़ा ?

,,—बड़ों की आज्ञा को क्यों नहीं उल्लङ्घन करना चाहिये ?

व्याकरण—"यह मेरी पुस्तक है" "वह मेरा खेत है" इन में यह और वह सर्वनाम निश्चय बताते हैं। इसलिए ये निश्चयवाचक सवनाम हैं।

"घर में कोई बैठा है" "मोहन किसी से बात कर रहा है" इन वाक्यों में कोई और किसी शब्द से किसी बात का निश्चय नहीं मालूम होता है। इस लिए "कोई" और "किसी" अनिश्चयवाचक सर्वनाम हैं। "तुमने जो पैसा कल लिया था सो क्या हुआ?" इस में जो और सो पैसा के लिए बोले गये हैं और ये सम्बन्ध प्रगट करते हैं इस लिए ये सम्बन्धवाचक सर्वनाम हैं। "उस घर में कौन लड़का रोता है" "टेबुल पर किस लड़के की किताब पड़ी है" इन वाक्यों में कौन और किस लड़के के लिए बोले गये हैं और इन से प्रश्न मालूम होता है। इसलिए ये प्रश्नवाचक सर्वनाम हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से इन चारों के उदाहरण ढूंढ़ो।

सब को प्रसन्न करना

अज्ञान = मूर्ख। परस्पर = आपस में। निरादर = अपमान।
वृत्तान्त = हाल।

किसी नगर में दो मित्र रहते थे, जिन में परस्पर बड़ा प्रेम था। एक दिन संयोग से वे दोनों किसी महात्मा के सत्संग में गये जिन की बाणी का बड़ा प्रभाव पड़ता था। उस दिन कीर्त्ति के ऊपर उपदेश हो रहा था। महात्मा ने दर्शाया कि "वास्तविक जीवन केवल उस मनुष्य का है जिस की संसार प्रशंसा करे और जिस की सेवा से सभी प्रसन्न हों। अपयश मृत्यु की निशानी है। यही नहीं बल्कि उस से भी निकृष्ट है।" इस उपदेश ने दोनों मित्रों के ऊपर बिजली का सा प्रभाव डाला। दोनों ने कहा चलो आज से हम भी अच्छे

अच्छे काम करें और संसार द्वारा प्रशंसा प्राप्त करें। दोनों के पास पचीस तीस हज़ार की पूँजी थी परन्तु इन दोनों की विचारशक्ति एकसी न थी। एक ने कहा चलो खूब दान करें; प्रत्येक मनुष्य को कुछ न कुछ दें इस से प्रशंसा प्राप्त होगी। इस प्रकार वह सोच कर अपना माल लूटाने लगा। जो कुछ पूँजी थी वह थोड़े ही दिनों में खर्च हो गयी। लोग उसकी प्रशंसा भी खूब करने लगे। यह अपनी प्रशंसा सुन कर कुप्पे की तरह फूल जाता था। अन्त में ऐसी नौबत आ पहुँची कि इसका घर आदि सब बिक गया और बाल-बच्चे कष्ट सहने लगे। इस अज्ञानी ने इन सब बातों की कुछ भी परवाह न की और उसी प्रकार दान देता रहा। अब जब पैसा पास न रहा तो किसी का पानी भर देता, और किसी की सेवा टहल कर दिया करता था। अब इसकी ऐसी दशा हो गयी कि जब कोई इस गरीब को एक मुहल्ले से दूसरे मुहल्ले में ले जाता तो मार्ग में मूर्ख लड़के इसकी हँसी उड़ाने लगते थे। कितने लोग इस को कुली और मज़दूर समझ कर इसका निरादर करने लगे। कुछ काल तक तो बेचारा सब कुछ सहता रहा पर थोड़े ही दिनों के पश्चात् वह भी कहने लगा कि यह प्रशंसा क्या है कि एक आपदा का घर है। किन्तु अपनी प्रतिज्ञा से फिर भी टस से मस नहीं हुआ। अब दूसरे मनुष्य का वृत्तान्त सुनो। उस ने अपने मन में विचारा कि सारी दुनिया को प्रसन्न करना और उसके द्वारा कीर्त्ति प्राप्त करना कठिन ही नहीं प्रत्युत् असम्भव है। सब नेकियों

और प्रशंसाओं की जड़ ईश्वर है। हमें उसीकी पूजा और उपासना करनी चाहिये। यह सोच कर वह ऐसा ही करने लगा। जब उसकी अन्तिम अवस्था ठीक हो गयी तब वह प्रतिदिन एक घण्टा औरों के साथ सत्सङ्ग में बिताने लगा। अब सम्पूर्ण नगरवासी उस के पास आने लगे और इस की कीर्त्ति चारों ओर फैलने लग गयी। यह बात जब उसके पुराने मित्र ने सुनी तो वह भी इस से मिलने के लिए आया और इस से मिल कर कहने लगा कि "भाई यह कैसी बात है कि हम तुम दोनों ही नेक काम करते हैं और दोनों ही कीर्त्ति के इच्छुक हैं पर तुम सुखी हो और तुम्हारी सभी प्रशंसा करते हैं किन्तु मेरी अवस्था इसके सर्वथा विपरीत है। मैंने सब धन-दौलत दूसरों को दान कर दी, मैं स्वयम् कंगाल बन गया, अब भी परोपकार का काम करता ही जाता हूँ किन्तु मैं दुःखी हूँ कीर्त्ति प्राप्त करने की बात कौन कहे, लोग सब जगह मेरा उपहास करते हैं।" दूसरे ने उत्तर दिया—"प्रिय मित्र! मुझ में और तुम में इतना ही अन्तर है कि तुम एक एक मनुष्य को प्रसन्न करना चाहते हो जो न कभी हुआ है और न कभी हो ही सकेगा। मैं केवल परमात्मा को प्रसन्न करता हूँ जो सब का स्वामी, सब का गुरु, सब का सच्चा माता-पिता, सब का पालन-पोषण करनेवाला एवं पूजनीय है। यदि वह प्रसन्न है तो सभी प्रसन्न हैं और यदि वह अप्रसन्न है तो फिर और किसी की प्रसन्नता कुछ काम नहीं देती। तुम ने महा भूल की और धोखा खाया। तुम्हारी प्रसन्न करने की रीति ही अनुचित थी।

यदि तुम मेरी तरह ईश्वर के चरणों के सेवक होते तो आप ही आप तुम से सब लोग प्रसन्न हो जाते और तुम्हारा सुयश फैल जाता। केवल उसी से सम्बन्ध रखने से काम निकलता है। दर दर ठोकरें खाना महा भूल है। देखो :—

एक नाम को जान कर, पूजा देय बिहाय।
तीरथ व्रत जप तप नहीं, सतगुरु चरण समाय॥
जो यह एक न जानिया, बहु जाने क्या होय।
एकहिं ते सब होत है, सब ते एक न होय॥
जो यह एके जानिया, तो जाना सब जान।
जो यह एक न जानिया, तो सब जान अजान॥
सब आप उस एक में, डाल पात फल फूल।
कबिरा पाछे क्या रहा, गहि पकड़ा जब मूल॥
एक जान एकै समझ, एकै के गुण गाय।
एक निरख एकै परख, एकै सों चित लाय॥

मित्र के इस प्रकार उपदेश देने पर उस मनुष्य ने अपनी भूल समझ ली और फिर उस दिन से वह भी इसी के पवित्र सत्सङ्ग में रहने लगा और पीछे उसका दुःख आनन्द में बदल गया।

प्रश्न—सब किसी को कोई प्रसन्न रख सकता है या नहीं।
,,—पहले मनुष्य ने क्या भूल की थी ?

व्याकरण—"वह पढ़ रहा है" इसमें वह सर्वनाम है। इसके पद-परिचय में इसका प्रकार, पुरुष, लिंग, वचन, कारक और अन्य शब्दों के साथ सम्बन्ध बताना चाहिये। यथा :—

वह—पुरुष वाचक सर्वनाम अन्य पुरुष, एक वचन, पुल्लिंग, कर्त्ता कारक और "पढ़ रहा है" क्रिया का कर्त्ता।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से किसी पाँच सर्वनाम का पद-परिचय लिखो।

कुतुबुद्दीन



कर्त्तव्य = काम। दासत्व = सेवकाई। कार्य्य = काम।

ईरान में नैशापुर एक ग्राम है। वहीं का कोई क़ाज़ी कुतुबुद्दीन को उस की बाल्यावस्था में अपने यहाँ रख कर उस से सेवक का काम लिया करता था कुतुबुद्दीन यथार्थ में गुलाम था।

जब क़ाज़ी मर गया तब कुतुबुद्दीन को शहाबुद्दीन मुहम्मद ग़ोरी ने ख़रीद लिया। कुतुबुद्दीन ने अपने नये स्वामी का कार्य्य इस उत्तमता से किया कि उसका स्वामी उस से शीघ्र ही प्रसन्न हो गया। कुछ ही दिनों के बाद मुहम्मद ग़ोरी ने उसकी कार्य्यपटुता देख कर उसे अपनी सेना का सेनापति बना दिया।

कई लड़ाइयों में कुतुबुद्दीन ने इस प्रकार बादशाह का

साथ दिया था कि उस का साहस दूना बढ़ गया था। बादशाह ने उसकी सहायता से कालपी, कालिञ्जर और अवध इत्यादि को अपने अधिकार में कर लिया। जब कुछ दिनों के पश्चात् मुहम्मद ग़ोरी मर गया तब उसके तख़्त पर कुत्बुद्दीन १२०६ ईस्वी में विराजमान हुआ। राजा को राज्य का अधिकारी होने पर क्या करना उचित है, इसे वह अच्छी तरह जानता था। वह जिस समय शाही पोशाक पहन कर न्याय करने के लिए बैठता और न्याय करता था उस समय लोगों को इसकी बुद्धिमानी का पूर्ण परिचय मिलता था।

कुत्बुद्दीन दान देने और परोपकार करने में भी कुछ कम नहीं था। कई ग़रीबों तथा कई सैनिक अफ़सरों के काम से प्रसन्न हो कर उसने उन्हें बड़ी बड़ी जागीरें दे दी थीं। अपनी कीर्त्ति अचल रखने के लिए उसने ढाई सौ फ़ीट से भी ऊँची एक मीनार दिल्ली में बनवा दी है जो अब तक वर्त्तमान है। उसपर फ़ारसी भाषा में मुसलमानी धर्म्म सम्बन्धी कई बातें लिखी हुई हैं। कुत्बुद्दीन चार वर्ष तक न्यायपूर्वक राज्य कर १२१० ईस्वी में एक खेल खेलते समय घोड़े से गिर कर मर गया।

प्रश्न—कुतबुद्दीन ने अपनी कीर्त्ति के लिए कौन कौन से काम किये हैं ?

,, —कुतबुद्दीन के उत्तम गुणों का वर्णन करो।

व्याकरण—लाल कपड़ा, थोड़ी चीनी, वह टोपी और सात लड़के इन में लाल कपड़ा का गुण, थोड़ी चीनी का अन्दाज़ या परिमाण, वह टोपी

का संकेत और सात लड़के की गिनती बताते हैं। इस लिए ये चारों शब्द क्रम से गुणबोधक, परिमाणबोधक, संकेतबोधक और संख्या-बोधक विशेषण हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में जितने विशेषण हों उनके प्रकार और विशेष्य बताओ।

वशिष्ठ जी का भरत को उपदेश देना

सुनहु भरत भावी प्रबल, विलखि कहेउ मुनि नाथ।
हानि लाभ जीवन मरन, यश अपयश विधि हाथ॥
अस विचारि केहि दीजिय दोषू। व्यर्थ काहि पर कीजिय रोषू॥
तात विचार करहु मन माहीं। शोच योग दशरथ नृप नाहीं॥
शोचिय विप्र जो वेद विहीना। तजि निज धर्म विषय लव लीना॥
शोचिय वैश्य कृपण धनवानू। जो न अतिथि शिवभक्ति सुजानू॥
शोचिय शूद्र विप्र अपमानी। मुखर मान प्रिय ज्ञान गुमानी॥
शोचिय पुनि पति वञ्चक नारी। कुटिल कलहप्रिय इच्छाचारी॥
शोचिय बटु निज व्रत परिहरई। जो नहिं गुरु आयसु अनुसरई॥
शोचिय गृही जो मोहबश, करै कर्म पथ त्याग।
शोचिय यती प्रपञ्च रत विगत विवेक विराग॥
बैखानस सोइ शोचन योगू। तप बिहाय जेहि भावै भोगू॥
शोचिय पिशुन अकारण क्रोधी। जननि जनक गुरु बन्धु विरोधी
सब बिधि शोचिय पर अपकारी। निज तनु पोषक निर्दय भारी॥
शोचनीय नहिं कोशल राऊ। भुवन चारि दश प्रगट प्रभाऊ॥

भयेउ न अहइ न होवनि हारा। भूप भरत जस पिता तुम्हारा॥
विधि हरिहर सुरपति दिशिनाथा। वरनहिं सब दशरथ गुनगाथा॥

कहहु तात केहि भाँते कोउ, करहिं बड़ाई तासु।
राम लखन तुम शत्रुहन, सरिस सुअन शुचि जासु॥

सब प्रकार भूपति बड़ भागी। बादि विषाद करिय तेहि लागी॥
यह सुनि समुझि शोक परिहरहू। सिरधरि राज रजायसु करहू॥
राउ राज पद तुम कहँ दीन्हा। पिता वचन फुर चाहिय कीन्हा॥
तजे राम जेहि बचनहि लागी। तनु परिहरेउ राम विरहागी॥
नृपहिं बचन प्रिय नहिं प्रिय प्राना। करहु तात पितु बचन प्रमाना॥
करहु सीस धरि भूप रजाई। है तुम कहँ सब भाँते भलाई॥
परशुराम पितु आज्ञा राखी। मारी मातु लोक सब साखी॥
तनय ययातिहिं यौवन दयऊ। पितु आज्ञा अघ अयश न भयऊ॥

अनुचित उचित विचार तजि, जे पालहिं पितु बैन।
ते भाजन सुख सुयश के, बसहिं अमर पति ऐन॥

अवशि नरेश वचन फुर करहू। पालहु प्रजा शोक परिहरहू॥
सुरपुर नृप पाइहिं परितोषू। तुम कहँ सुकृत सुयश नहिं दोषू॥
वेद विदित सम्मत सब ही का। जेहि पितु देइ सो पावै टीका॥
करहु राज परिहरहु गलानी। मानहु मोर वचन हित जानी॥
सुनि सुख लहब राम बैदेही। अनुचित कहब न पण्डित तेही॥
कौशल्यादि सकल महतारी। तेऊ प्रजा सुख होहिं सुखारी॥
मरम तुम्हार राम सब जानहिं। सो सब विधि तुम सब भल मनहिं॥
सौंपहु राज राम के आये। सेवा करहु सनेह सुहाये॥

कीजिय गुरु आयसु अवशि, कहहिं सचिव कर जोरि।
रघुपति आये उचित जस, तब तस करब बहोरि॥

गोस्वामी तुलसीदास।

प्रश्न—राजा दशरथ क्यों शोच करने योग्य नहीं थे?
,,—वेद कितने हैं?

व्याकरण :—"बालक रोता है" इस वाक्य में "रोता है" क्रिया का कर्त्ता बालक है। रोना एक काम है और उसका फल कर्त्ता ही पर पड़ता है। इस क्रिया में कर्म नहीं है। यदि इस में कर्म लगाना चाहें तो क्या रोता है और किस को रोता है कहने से बात नहीं बैठती। इस लिए ऐसी क्रियाओं को जिनका फल केवल कर्त्ता ही पर पड़े अकर्मक क्रिया कहते हैं।

अभ्यास :—ऊपर के पाठ से अकर्मक क्रियाओं के चार उदाहरण ढूँढ़ो।

माधो

निश्चय = ठीक। अनुमान = सोच। सरोवर = तालाब।

किसी समय उज्जैन नगरी में माधो नामक एक परम गुणज्ञ पण्डित रहता था। उसकी स्त्री का नाम रूपवती था। समय पाकर उस स्त्री को एक पुत्र हुआ। एकदिन वह स्त्री अपने लड़के को अपने स्वामी की रक्षा में रख कर आप सरोवर में स्नान करने के लिए चली गयी।

ठीक उसी समय एक राजा ने माधो को अपने यहाँ दान लेने के लिए बुला भेजा। माधो यह समाचार पाकर अत्यन्त

प्रसन्न हुआ। किन्तु अपने बालक को अकेले छोड़ कर जाना वह उचित नहीं समझा। कुछ देर तक आगा पीछा करने के अनन्तर उसने यह सोचा कि यदि किसी पदार्थ के लेने में शीघ्रता नहीं की जाय तो वह हाथ नहीं लगता। इसी प्रकार कई बातों की मीमांसा कर उसने अपने बालक की रक्षा में एक नेवल को रख कर राजा के यहाँ जाना स्थिर कर लिया और थोड़ी देर के बाद धन के लोभ में पड़, अपने बच्चे को अकेला छोड़ कर चला गया।

उस के जाते ही एक विषधर सर्प उस बच्चे के निकट सहसा कहीं से आ उपस्थित हुआ। नेवल ने सर्प को लड़के का शत्रु जान कर उसके तीन टुकड़े कर डाले। सर्प के मरने से वह स्थान लाल हो गया। जब वह स्त्री सरोवर से स्नान कर लौट आयी और अपने बच्चे के निकट जब उसने किसी को नहीं देखा तब वह अत्यन्त घबरा कर विचारने लगी कि यह क्या हो गया जो मेरे बच्च के निकट की भूमि रक्त से लाल देख पड़ती है। इन बातों को यह सोचती ही थी कि वह नेवल एकाएक आ कर उसके रों पर लोटने लगा।

नेवल के मुख में रक्त लगा हुआ देख कर उस स्त्री ने अनुमान किया कि ज्ञात होता है कि इसी दुष्ट ने मेरे बच्चे को मार डाला है। ऐसा विचार कर क्रोध में आ उसने नेवल का काम तमाम कर डाला। पर जब वह अपने बच्चे के निकट गयी और लड़के के ऊपर से उसने कपड़े को हटाया तब तो वह बहुत विस्मित हुई और शोक करने लगी—"हा! मैंने व्यर्थ बिना

विचारे ही नेवल को मार डाला ! मैंने आज बड़ा भारी अधर्म्म किया ! हे ईश्वर, मुझ सी और कौन पापिन निकृष्ट और अधमा स्त्री होगी जो बिना अपनी बुद्धि से कुछ काम लिए ऐसा घोर पाप कर सकती हो।" इसी हेतु कहा है कि बुद्धिमान् को प्रत्येक क्षण विचार कर कार्य्य करना उचित है।

प्रश्न—नेवल क्यों उसके पैरों पर लोटने लगा था ?

,, —ब्राह्मण को अपने लड़के को छोड़ कर जाना उचित था या नहीं ?

व्याकरण—"बालक रोटी खाता है" इस वाक्य में "खाता है" क्रिया का कर्त्ता बालक है। खाना एक काम है और उसका फल बालक पर न पड़ कर रोटी पर पड़ता है जो कर्मकारक है इस लिए ऐसी क्रियाओं को, जिनका फल कर्त्ता पर न पड़ कर कर्म पर पड़े सकर्मक क्रिया कहते हैं।

अभ्यास :—ऊपर के पाठ से सकर्मक क्रियाओं के पाँच उदाहरण दो।

रहीम के दोहे

भावी = होनहार। सलिल = पानी। गुन = गुण, रस्सी। उदधि = समुद्र।

राम न जाते हरिन संग, सीय न रावण साथ।
जो रहीम भावी कतहुँ, होति आपनो हाथ॥ १॥
संपत भरम गवाइ कै, हाथ रहत कछु नाहिं।
ज्यों रहीम शशि रहत है, दिवस अकाशहि माहिं॥ २॥
धनि रहीम जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय।
उदधि बड़ाई कौन है, जगत पियासो जाय॥ ३॥

गुन ते लेत रहीम जन, सलिल कूप से काढ़ि।
कूपहुँ ते कहुँ होत है, मन काहू को बाढ़ि॥ ४॥
रहिमन अँसुआ नयन ढरि, जिय दुख प्रगट करेइ।
जाहि निकारो गेह ते, कस न भेद कहि देइ॥ ५॥
ज्यों रहीम गति दीप की, कुल कपूत गति सोय।
बारे उजियारो करै, बढ़े अँधेरो होय॥ ६॥
जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन को मोह।
रहिमन मछरी नीर को, तऊ न छाँड़ति छोह॥ ७॥
धन दारा अरु सुतन में, रहत लगाये चित्त।
क्यों रहीम खोजत नहीं, गाढ़े दिन को मित्त॥ ८॥
यह रहीम सब संग लै, जनमत जगत न कोय।
वैर प्रीति अभ्यास यश, होत होत पै होय॥ ९॥

प्रश्न—गाढ़े दिन का मित्र कौन है?

व्याकरण—(१) मैंने खाया था। उसने खाया है।
(२) मैं खाता हूँ। वह खाता है।
(३) मैं खाऊँगा। वह खायगा।

इन तीन प्रकार के वाक्यों में पहले प्रकार के वाक्यों से मालूम होता है कि खाना जो एक काम है उसको हुए कुछ समय बीत गया। दूसरे से जाना जाता है कि काम अभी हो रहा है। और तीसरे से मालूम होता है कि काम अभी आगे किया जायगा अर्थात् उसका प्रारम्भ भी अभी नहीं हुआ है। इस लिए पहले प्रकार की क्रियाओं को भूतकाल की क्रिया, दूसरे को वर्त्तमान काल की क्रिया और तीसरे को भविष्यत् काल की क्रिया कहते हैं। बस क्रियाओं में यही तीन काल होते हैं।

अभ्यास :—तीनों कालों की क्रियाओं के दस दस उदाहरण लिखो।

कुत्ता



चतुष्पद = चार पैरवाला। ध्वनि = आवाज़।

चतुष्पद जन्तुओं में कुत्ता भी बड़े काम का जानवर है। इस का आकार लम्बा होता है। इसके पैर लम्बे लम्बे होते हैं। इसकी पूँछ टेढ़ी तथा किसी किसी की झबरी होती है। इसका सम्पूर्ण शरीर छोटे बड़े रोवों से ढका रहता है और इसका एकसा रङ्ग नहीं होता वरन् यह रङ्ग भिन्न भिन्न रङ्गों से युक्त होता है। इसके मुख में बड़े बड़े तथा तीक्ष्ण दाँत होते हैं।

कुत्तों का स्वभाव साधारणतः अच्छा होता है। वे अकेले

रहना नहीं चाहते किन्तु मिलनसार साथियों तथा और और कुत्तों के साथ रहना पसन्द करते हैं। जब ये अपने साथियों के साथ झुण्ड बाँध कर चलते हैं तब किसी से झगड़ा नहीं करते। कुत्ते अपनी अंगुलियों के बल से चलते हैं। इनके अगले पैरों में पाँच पाँच अंगुलियाँ होती हैं और ये चलते समय ज़मीन को स्पर्श नहीं करतीं।

कुत्ते अन्न, माँस, दूध इत्यादि खा कर अपना जीवन निर्वाह करते हैं। ये माँस खाना अधिक पसन्द करते हैं और उसे चीर फाड़ कर खाते हैं। माँस ही के खाने के लिए इनके दाँतों की बनावट भी बड़े विचित्र ढंग की होती है। ये जिन दाँतों के द्वारा माँसाहार करते हैं उन दाँतों को कुकुरदन्त कहते हैं। इनके ये दाँत कैंची की धार के समान कुतरने और फाड़ने के लिए बनाये गये हैं। इनकी जीभ पतली और चिकनी होती है। जिस समय कुत्ते अपनी जीभ से कोई वस्तु चाटते हैं उस समय एक तरह की ध्वनि होती है। कुत्ते एक ही जाति के नहीं होते वरन् इनकी भिन्न भिन्न जातियाँ होती हैं। उन में स्पेनियल, बुलडौग, न्युफाण्डलैण्ड और सेण्टबर्नार्ड आदि कई जातियाँ प्रसिद्ध हैं।

कुत्ते मनुष्यों के अनेक प्रकार के कार्य्य किया करते हैं। इन में सब से बड़ा गुण यह है कि ये अपने स्वामी के बड़े भक्त होते हैं।

कुछ समय पहले लोगों का यह विचार और विश्वास था कि कुत्ते बेकार जन्तु हैं परन्तु अब यह विचार और

विश्वास धीरे धीरे दूर होता जा रहा है। आज कल कुत्तों में इतनी भारी शक्ति का विकाश हुआ देख पड़ता है कि ये थोड़ी सी सहायता के द्वारा अङ्क इत्यादि हल कर सकते हैं। हाल में अमेरिका में यह बात भी मान ली गयी है कि कुत्ते चन्दा भी वसूल कर सकते हैं।

इतना ही नहीं वरन् इनकी स्वामिभक्ति कार्य्यपटतादि कई गुण अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। एक समय की बात है कि एक साहब किसी जहाज़ में अपनी स्त्री और दो बालिकाओं के साथ चले जा रहे थे। संयोगवश वायु के झोंके से साहब की छोटी लड़की पानी में गिर पड़ी। इस घटना को देख कर वे दोनों स्त्री पुरुष अत्यन्त व्याकुल हो गये। कुछ देर पीछे उन्हों ने अपने साथ में रहनेवाले कुत्ते से अपनी लड़की के गिर जाने के विषय में कहा। यह सुन कर वह कुत्ता शीघ्र ही पानी में कूद पड़ा और कुछ देर बाद उस लड़की के हाथों को अपने मुँह से पकड़े हुए जल से बाहर निकल आया। इस कार्य्य को देख कर साहब और दूसरे दूसरे लोग भी अति प्रसन्न हुए किन्तु अन्त में लड़की का प्राणान्त देखकर सब को अत्यन्त दुःखित होना पड़ा।

प्रश्न—कुत्ते मनुष्यों के कौन कौन से काम कर सकते हैं ?

व्याकरण—"घोड़े घास खाते हैं" इस वाक्य में "खाते हैं" क्रिया है। इसका पद-परिचय करने में इसका प्रकार, काल, पुरुष, लिंग, वचन, कर्त्ता और कर्म बताना चाहिये। यथा खाते हैं:—क्रिया, सकर्मक क्रिया, वर्त्तमान काल, अन्यपुरुष, पुल्लिंग, बहुवचन, कर्त्ता "घोड़े" और कर्म "घास" है।

नोट :—यदि क्रिया अकर्मक हो तो कारक में केवल उसका कर्त्ता बताना चाहिये।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से पाँच अकर्मक और पाँच सकर्मक क्रियाओं के पद-परिचय लिखो।

महाराजा नल और महारानी दमयन्ती

विख्यात = प्रसिद्ध। सम्पन्न = भरापूरा। सन्तान = लड़काबाला।

राजा नल निषध देश के राजा थे। इनके पिता का नाम वीरसेन था। राजा नल बाल्यावस्था से ही अपना आचरण सत्य और शुद्ध रखते थे। इन का किसी से किसी प्रकार का वैर भाव नहीं था। एक दिन राजा नल अपना मन बहलाने के लिए अपनी फुलवारी में टहलने के लिए गये। उसी समय कई उड़ते हुए हंस उस बाग में आ कर दाना चुगने लगे। राजा नल उन हंसों की सुन्दरता पर मुग्ध हो गये और दौड़ कर उन हंसों में एक को उन्हों ने पकड़ लिया।

नल के पकड़ लेने पर उस हंस ने कहा कि "ऐ राजा नल! तू कृपाकर मुझे छोड़ दे। मैं इसके बदले एक अति रूप-गुण-सम्पन्ना राज-कन्या दमयन्ती से तेरा विवाह करा दूंगा। दमयन्ती विदर्भ नगर के राजा भीमसेन की पुत्री है। उसके रूप और गुण सम्पूर्ण संसार में विख्यात हैं।"

राजा नल ने हंस की इन बातों को सुन कर उसे सहर्ष

छोड़ दिया। वह हंस अपना वचन पूरा करने के लिए उड़ता उड़ता विदर्भ नगर में जा पहुँचा और फिर वहाँ चला गया जहाँ दमयन्ती अपनी सहेलियों के सहित आमोद कर रही थी। दमयन्ती भी उस हंस की सुन्दरता पर मोहित हो गयी और कुछ दूर पीछा करने पर उसने उसे पकड़ लिया। दमयन्ती द्वारा पकड़े जाने पर उस हंस ने कहा, "ऐ दमयन्ती!—यदि तू दया कर मुझे छोड़ दे, तो मैं अत्यन्त गुण-सम्पन्न सुशील धर्म्मात्मा राजा नल से तेरा व्याह करा दूँगा जो निषध देश के महाराजा वीरसेन के पुत्र हैं। राजा नल के रूप और गुणों की प्रशंसा मैं कहाँ तक करूँ। यदि ईश्वरेच्छा से संयोग बन आया तो मेरी बातों की परीक्षा हो जायगी।"

इस प्रकार दमयन्ती ने हंस की बातें सुन कर उसे छोड़ दिया और तभी से अपने जी में यह ठान लिया कि मैं सिवा नल के और किसी से विवाह नहीं करूँगी। दमयन्ती राजा नल के गुणों की बड़ाई बड़े प्रेम और आनन्द से सुना करती थी। यदि कोई उसके सामने किसी अन्य राजा के गुणों का वर्णन करता तो उसे वह ऐसा अप्रिय लगता कि उसे सुनना भी नहीं चाहती थी। कुछ दिनों के पश्चात् दमयन्ती के पिता ने उसके विवाह के लिए स्वयंवर की तिथि नियत कर देश-देशान्तर के राजाओं के पास निमन्त्रण पत्र भेजा। उस स्वयंवर में आने के लिए राजा नल को भी निमंत्रण दिया गया था। स्वयंवर की तैयारी सुन कर दमयन्ती से विवाह करने



महारानी दमयन्ती ।

की इच्छा से वहाँ बड़े बड़े राजा उपस्थित हुए। अन्त में उन आये हुए सभी राजाओं को परित्याग कर दमयन्तो ने अपने प्रण के अनुसार राजा नल ही से विवाह किया। राजा नल और दमयन्ती का यह सम्बन्ध उन आये हुए राजाओं को अच्छा नहीं लगा। पर वे कर ही क्या सकते थे। विवाह हो जाने के बाद राजा नल और दमयन्ती ने कई वर्षों तक आनन्द से जीवन व्यतीत किया। कुछ दिनों के बाद राजा नल को कई सन्तानें हुईं।

राजा नल जुआ खेलना बहुत पसन्द करते थे। एक दिन उनकी इच्छा हुई कि मैं अपने भाई पुष्कर के साथ जुआ खेलूँ। संयोगवश राजा नल जुआ खेलने लगे। और उस खेल में अपना राजपाट और धन सम्पत्ति सब कुछ हार गये। सिवा अपनी स्त्री आर लड़कों के उनके पास और कुछ नहीं बचा। राजा नल इस दुष्कर्म्म के करने से विशेष दुःखी हुए। कई दिनों तक भूखों रहना पड़ा और अपने बाल-बच्चों को दुःख से व्याकुल देख कर उन्हों ने अपनी स्त्री दमयन्ती से कहा कि "तुम अपने लड़कों को लेकर अपने पिता के यहाँ चली जाओ। इस समय मेरे दिन विपरीत हो गये हैं। दमयन्ती ने अपने लड़कों को तो अपने पिता के यहाँ भेजवा दिया पर स्वयं राजा नल ही के साथ रहना उसने अपना धर्म समझ लिया। कुछ दिनों के बाद राजा नल अपनी स्त्री को साथ ले, दुःख से व्याकुल होकर जङ्गल में चले गये और वहीं वृक्षों की पत्तियाँ, फल, फूल इत्यादि खा कर अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

एक दिन राजा नल ने अपनी स्त्री को जङ्गल में विशेष दुःखित देख कर कहा कि "ऐ दमयन्ती! तुम सुकोमल शरीरवाली राजपुत्री हो। जङ्गल में तुम्हें अनेकों दुःख झेलने पड़ रहे हैं। अतएव तुम भी अपने पिता के यहां चली जाओ। अपने स्वामी की बात सुन कर दमयन्ती बोली कि प्राण-नाथ! मैं आप को त्याग कर स्वर्ग से बढ़ कर सुख मिलने पर भी अपने पिता के यहाँ नहीं जा सकती। मुझे आप के साथ बन ही में सब प्रकार का आनन्द है। राजा नल दमयन्ती की बातें सुन कर मन ही मन उसकी बुद्धि की प्रशंसा करने लगे।

एक समय राजा नल जङ्गल में घूम घूम कर दमयन्ती को उसके पिता के यहाँ जाने का मार्ग दिखाने लगे। दमयन्ती ने मार्ग दिखाने का कारण राजा नल से पूछा और कहा कि "स्वामी! क्या आप मुझ निःसहाय अबला को त्याग कर कहीं भाग जाना चाहते हैं?"

उस के बाद एक दिन राजा नल अपनी स्त्री को जङ्गल में सोई हुई दशा में ही छोड़कर भाग गये। जब दमयन्ती की निद्रा टूटी और उसने अपने को अकेली देखा, तब "हा राजा नल! हा राजा नल!!" कह कर विलाप करने लगी। उस असहाय अबला का रुदन सुन कर वृक्ष की पत्तियाँ भी विलाप करने लगीं। दमयन्ती कभी रोती और कभी मूर्च्छित हो कर पृथिवी पर गिर पड़ती। अन्त में वह उस घोर जङ्गल में इधर उधर भटकती अपने पिता के घर जाने का मार्ग ढूँढ़ने लगी।

थोड़ी ही दूर आगे बढ़ने पर उस भयंकर मार्ग में एक विकराल सर्प ने उसे घेर लिया। उसे देखते ही दमयन्ती के होश उड़ गये और वह अपने बचने की कोई आशा न देख कर अशरण-शरण दीनबन्धु की पुकार मचाने लगी। परमात्मा की अपार कृपा से तत्काल ही वहाँ पर एक व्याधा आ पहुँचा और दमयन्ती को घोर विपत्ति में पड़ा हुआ देखकर उसने उस भयंकर सर्प का बध कर डाला। उस समय वह इसे परमेश्वर की कृपा समझकर आनन्द से फूल उठी। पर अब दमयन्ती के सिर पर एक दूसरी विपत्ति आ पहुँची। वह व्याधा अब अपने मन में सोचने लगा कि ऐसी रूपवती एवं अति कोमल शरीरवाली स्त्री इस निर्जन वन में कहाँ से आयी। अन्त में उसने दमयन्ती से उसका ब्यौरा पूछा और तब उस दुष्ट ने उस से विवाह कर लेने की इच्छा प्रगट की। वह ब्याधा दमयन्ती के लिए उस सर्प से भी भयंकर निकला। ऐसे कुसमय में सती साध्वी दमयन्ती इसकी नीचता देख कर फिर ईश्वर से प्रार्थना की, कि "हे परमेश्वर यदि मैं सचमुच पतिव्रता स्त्री हूँ, यदि मैं सचमुच राजा नल में सत्य प्रेम रखती हूँ और यदि आप सचमुच दीनबन्धु हैं तो यह नीच व्याधा जो मेरे ऊपर कुदृष्टि डालने पर तत्पर हुआ है, मेरे शाप से अभी जल कर भस्म हो जाय।" बस दमयन्ती का इतना कहना था कि वह व्याधा वहीं पर भस्म हो गया।

अब जब दमयन्ती को कुछ धैर्य्य हुआ तो वह धीरे धीरे

चल कर अपने पिता के गृह जा पहुंची और राजा नल के भूल जाने का बहाना कर वहीं रहने लगी।

कुछ दिनों के पश्चात् राजा नल भी घूमते घूमते अपनी दीनता के कारण अयोध्या में पहुँचे और वहाँ अपना नाम बाहुक रख कर राजा ऋतुपर्ण के यहाँ सारथी का काम करने लगे। दमयन्ती का पिता बहुत दिनों तक राजा नल की खोज कराता रहा पर कुछ पता नहीं लगा। कुछ दिनों के पीछे उन्हें किसी प्रकार राजा ऋतुपर्ण के यहाँ नल ही के आचरण के से एक व्यक्ति का पता लगा। दमयन्ती ने इस सुसमाचार को सुन कर अपने पिता से पुनः स्वयंवर कराने की प्रार्थना की और अपने मन में सोचा कि इस स्वयंवर में राजा ऋतुपर्ण भी अवश्य आवेगा यदि उस में राजा नल मिल गया तो अत्युत्तम होगा।

जब स्वयंवर की तैयारी हुई और सब राजा आ उपस्थित हुए तब राजा ऋतुपर्ण का सारथी बन कर राजा नल भी आये। दमयन्ती अपनी दासी और सन्तानों के द्वारा उनकी परीक्षा कर और उन्हें भलीभाँति पहचान कर उनसे जा मिली। जिस समय दमयन्ती और राजा नल का पुनःमिलन हुआ उस समय का अद्भुत दृश्य देखने ही योग्य था। जब ऋतुपर्ण को यह समाचार मिला तब वह भी अत्यन्त प्रसन्न हुआ और राजा नल से अपने अपराध के लिए क्षमा माँगी।

दमयन्ती के पिता भीमसेन ने राजा नल को अपने यहाँ

बहुत दिनों तक रखा और तब उन्हें पुनः धन जन से परिपूर्ण कर अपने गृह भेजवा दिया। राजा नल अपने घर जाकर अपने भाई पुष्कर से पुनः जुआ खेल अपना सारा राजपाट लौटा कर फिर आनन्द से दमयन्तो के साथ रहने लगे।

प्रश्न—राजा नल दमयन्ती को जङ्गल में छोड़ कर क्यों भाग गये थे ?

,, —दमयन्ती के उत्तम उत्तम गुणों का वर्णन करो।

व्याकरण—"वह कहाँ जाता है" "वह कब आवेगा" "वह कितना खाता है" इन वाक्यों में कहाँ, कब और कितना ये ऐसे शब्द हैं जिनका कारक, लिङ्ग, वचन, पुरुष आदि के कारण कभी रूप नहीं बदलता— ऐ सदा एक समान रहते हैं। इस लिए ऐसे शब्दों को अव्यय कहते हैं।

कहाँ कब और कितना ये तीनों अपनी क्रियाओं के विशेषण के ऐसे मालूम पड़ते हैं। इस लिए ऐसे शब्दों को, जो क्रिया के विशेषण हों क्रिया विशेषण अव्यय कहते हैं। अब तब, जब कब इत्यादि कालवाचक ; यहाँ, वहाँ, जहाँ, कहाँ, इत्यादि स्थानवाचक , ज्यों, त्यों, यों कैसे इत्यादि भाववाचक ; कितना, उतना, इतना इत्यादि परिमाणवाचक क्रिया विशेषण कहे जाते हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ में जितने क्रिया विशेषण अव्यय हों उनके प्रकार बताओ।

बुरी और अच्छी सङ्गति का फल

आचरण = चाल-चलन। यथाथ = ठीक।

किसी नगर में कपिल देव नाम का एक राजा रहता था। उसके दो पुत्र थे। बड़े का नाम नारायणदास और छोटे का नाम गङ्गादास था। बालकपन ही से उन दोनों की प्रकृति भिन्न थी। नारायणदास यद्यपि बड़ा लड़का था, तथापि उसका आचरण अत्यन्त दूषित था। गङ्गादास छोटी अवस्था से ही अच्छे अच्छे लोगों की सङ्गति रखता और अपने से बड़ों की आज्ञा के अनुकूल चलता था जिसे देख कर लोग इसकी प्रशंसा किया करते थे।

कुछ काल पीछे राजा कपिलदेव बीमार हो कर मृत्यु को प्राप्त हो गया और नारायणदास ही अपने पिता के राज्य का अधिकारी हुआ। नारायणदास यद्यपि राज्य का अधिकारी हुआ तथापि थोड़े ही दिनों में वह बुरे लोगों की सङ्गति में पड़ गया और अपने सम्पूर्ण राज्य को उसने नष्ट भ्रष्ट कर डाला। गङ्गादास अपने भाई की ऐसी बुरी प्रकृति देख कर मन ही मन दुःखित होता रहता था।

इस कुसङ्गति का फल यहाँ तक हो गया कि कुछ ही दिनों के पश्चात् नारायणदास ने चोरी करना आरम्भ किया और अपने छोटे भाई गङ्गादास को अपने से पृथक् कर दिया।

गंगादास सदैव ईश्वर का भजन करता और सत्कर्म्म करने में प्रवृत्त रहता था। किन्तु दरिद्रता के कारण कुछ चिन्तित भी रहता था। उसका बड़ा भाई नारायणदास चोरी और कपट से आनन्द पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करता था और कभी कभी अपने छोटे भाई गंगादास को भी चोरी इत्यादि नीच कर्म करने के लिए उभाड़ता था। पर गंगादास यथार्थ में शुद्ध आचरण का ईश्वरभक्त व्यक्ति था, इस कारण वह अपने बड़े भाई नारायणदास के कथनानुसार कभी नहीं चलता था। इसी लिए नारायणदास इस से बहुत क्रुद्ध रहा करता था।

एक दिन नारायणदास कहीं से चोरी की कुछ अच्छी अच्छी वस्तुएँ लाकर खा रहा था। उसी समय उसका छोटा भाई भी कहीं से भूखा हुआ उसके सामने आया और उस से कुछ खाने के लिए माँगने लगा। पर उसने कड़ी कड़ी बातें कह कर उसे खाना देना अस्वीकार किया। उसके इस व्यवहार से गंगादास अपने मन में बड़ा दुःखी हुआ और बिचार करने लगा कि "हे ईश्वर! मैं छल कपट कुछ नहीं करता इस से मुझे पेट भर भोजन भी नहीं मिलता, पर मेरा भाई जो नित्य अनेकों पापकर्म्म करता रहता है उसे सब कुछ खाने को मिल जाता है। यह सब तुम्हारी माया है। तुम्हारे भेदों का पता कौन पा सकता है।" ऐसा विचारता हुआ वह अपने गृह को लौट आया।

एक दिन नारायणदास गंगादास को साथ ले कर कहीं जा रहा था। रास्ते में घात लग जाने के कारण नारायणदास

अपने स्वभाव के अनुसार एक गृहस्थ के गृह में जा घुसा और कुछ चोरी कर अकेले वहाँ से कहीं भाग गया। ग्राम के लोगों ने भ्रमवश उसके छोटे भाई ही को चोर समझ कर पकड़ा और दण्ड दिया। उस समय यह अत्यन्त दुःखित हो ईश्वर का नाम स्मरण कर विलाप करने लगा। पीछे किसी प्रकार छुटकारा पा कर अपने घर चला आया।

इसी प्रकार गंगादास सुकर्म्म करने पर भी अवनति को प्राप्त होता गया और इसका बड़ा भाई पापकर्म्म करने पर भी उन्नति के शिखर पर चढ़ता गया। ऐसा देख कर गंगादास बहुत सोचता और दुखी होता था।

एक दिन गङ्गादास सन्ध्या समय किसी धर्म्मसभा में धर्म्म चर्चा सुनने के लिए जा रहा था। कुछ दूर जाने पर एक खाई में गिर पड़ा और उसके दोनों पैरों में बड़े बड़े तीक्ष्ण काँटे गड़ गये, जिस से अविरल रुधिर की धारा बहने लगी और वह वहीं पड़ गया। ठीक उसी मार्ग से उसका बड़ा भाई भी कुछ धन हाथ पर धरे कहीं से चला आता था। अपने भाई की यह दशा देख कर उसने कहा कि "तुम्हारी अच्छी गति हुई। मैं तुम्हें इसी लिए कहा करता था कि मैं जो काम करता हूं उसे ही तू भी किया कर, धर्म्म इत्यादि को जाने दे। पर तू मेरी बातों पर कुछ भी ध्यान नहीं देता था। आज यह उसी का फल है।" ऐसा कह नारायणदास उसे रोते हुए ही छोड़ कर चला गया।

उस समय गङ्गादास ने अपनी अवस्था पर विचार कर ईश्वर

से प्रार्थना की कि "हे अन्तर्यामी, दीनरक्षक ईश्वर! तुम्हारे बिना कौन मेरी सुधि ले सकता है; कृपा कर मुझे इस घोर सङ्कट से बचाओ।" इस प्रकार की दीन प्रार्थना सुन कर एक ऋषि उस जङ्गल से अचानक प्रगट हो उसके निकट जा कर बोले। "पुत्र! तू सोच मत कर। ले मैं तेरे पैरों के काँटे निकाल देता हूं। जा अब आज से तेरी विपत्तियाँ दूर हुईं।" गङ्गादास उस ऋषि की बातें सुन कर शीघ्र उठ खड़ा हुआ, और उन के पैरों पर गिर कर विनीत प्रार्थना कर के अपने भाई की उन्नति और अपनी अवनति का कारण पूछने लगा। ऋषि ने हँस कर उत्तर दिया कि "पुत्र! तू अज्ञानी है। देखो तुम्हारे भाई के ऐसे उत्तम कर्म्म थे कि यदि वह सत्पथ पर चलता होता तो उसके लिए आज एक अच्छे राज्य का स्वामी बनना निश्चय था, पर अपने कुकर्मों के कारण वह इतना ही हो कर रह गया और तुम्हें आज फाँसी पड़ना था किन्तु तुम्हारे सत्कर्म्मों के कारण तुम्हें यही काँटा गड़ कर रह गया।" ऋषि की ऐसी देव-वाणी सुनकर वह इनके पैरों पर गिर पड़ा और कुछ हो दिनों के बाद अपनी पूर्व्वावस्था को प्राप्त हो गया।

प्रश्न—ऋषि ने उसे क्या उपदेश किया?

,, —अन्तर्यामी शब्द से एक वाक्य बनाओ?

व्याकरण—"मेरी पुस्तक आलमारी के भीतर है" "मैं उसके बिना नहीं पढ़ सकता" इन वाक्यों में भीतर और बिना अव्यय हैं और ये दूसरे शब्दों के साथ सम्बन्ध रखते हैं। इस लिए ये सम्बन्धवाचक अव्यय हैं।

"मोहन और सोहन पढ़ते हैं" "तुम बैठो परन्तु मैं जाता हूं" इनमें और, परन्तु ये दो शब्दों या वाक्यों को जोड़नेवाले हैं। इस लिए ऐसे अव्ययों को संयोजक कहते हैं।

"हाय! हाय! यह क्या हुआ" "वाह वाह तुम धन्य हो" इन में हाय हाय, और वाह वाह शोक और हर्ष आदि के सूचक हैं; अर्थात् ये विस्मय जनाते हैं; इस लिए ये विस्मयादि बोधक अव्यय हैं।

अभ्यास—ऊपर के पाठ से इन अव्ययों के उदाहरण ढूंढ़ो।

कबीर की साखी



यद्यपि हम कायर कुटिल, खरे चाकरी चोर।
तदपि कृपा नहिं छाड़ियो, चितै आपनी ओर॥

गुरु बिचारा क्या करे, हिरदा भया कठोर।
नौ नेजे पानी चढ़े तऊ, न भीजे कोर॥
जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ।
हौं बौरी ढूंढ़न गई, रही किनारे बैठ॥
बालू जैसी कर करी, उज्जल जैसी धूप।
ऐसी मीठी कुछ नहीं, जैसी मीठी चूप॥
नव द्वारे का पींजरा, यामें पंछी पौन।
रहिबे को अचरज अहै, गयो अचंभा कौन॥
दुख सुख एक समान है, हरष सोक नहिं व्याप।
पर उपकार निकामता, उपजे छोह न ताप॥
पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा, पण्डित भया न कोय।
एकै अच्छर प्रेम का, पढ़े सो पण्डित होय॥
माली आवत देखि कै, कलियाँ करीं पुकार।
फूले फूले लेहु चुनि, कालि हमारो बार॥
काची काया मन अथिर, थिर थिर काम करंत।
ज्यों ज्यों नर निधरक फिरे, त्यों त्यों काल हसंत॥
आस पास योधा खड़े, सबै बजावे गाल।
माँझ महल ते ले चला, ऐसा बरबस काल॥
बकरी पत्ती खाति है, ताकी काढ़ी खाल
जो बकरी को खात है, तिन को कौन हवाल॥
खूदन तो धरती सहे, बाट सहे बनराय।
कुबचन तो साधू सहे, और ते सह्यो न जाय॥

प्रश्न—अन्तिम दो दोहों का भावार्थ कहो।

व्याकरण—"राम ने रावण को मारा" इस वाक्य में केवल एक उद्देश्य और एक विधेय है। इस लिए ऐसे वाक्य को सरल वाक्य कहते हैं।

अभ्यास—(१) पाँच ऐसे वाक्य कहो जिन में केवल एक एक उद्देश्य और एक एक विधेय हो।

(२) ऊपर के पाठ से सरल वाक्यों के तीन उदाहरण दो।

बुराई का फल

पथिकाश्रम = धर्मशाला। आश्रय = सहारा।

किसी कारबार में रुपये का अभाव जान कर एक सौदागर अपने घर से ५००) रुपये की एक थैली ले परदेश जा रहा था। वह मार्ग में जहाँ सन्ध्या हो जाती थी वहाँ ही थैली लुट जाने के भय से आदमियों का आश्रय लेकर किसी पथिकाश्रम में रह जाया करता था। कुछ दिनों तक इसी प्रकार यात्रा करने के पश्चात् एक दिन विशेष सन्ध्या हो जाने के कारण उसने एक पथिकाश्रय में रहने का विचार किया और पथिकाश्रम के स्वामी से रहने के लिए स्थान माँगा।

पथिकाश्रम जिस व्यक्ति का था वह जाति का बनियाँ था। बनियें ने इसे भरापूरा देख कर अपने मन में यह अनुमान किया कि आज मुझे एक अच्छा गाहक हाथ आया है। यदि किसी प्रकार इसे मरवा डालूँ तो इसके सब रुपये लेकर अपने नित्य के कष्ट से बच सकता हूं।

ऐसा विचार कर उसने सहष उस बटोही को रहने के लिए एक एकान्त कोठरी दे दी। और उस से कह दिया कि आप आनन्द पूर्वक निश्चिन्त भाव से यहाँ रहें। यहाँ किसी प्रकार का भय नहीं है। बनिये का इतना आग्रह देख कर उसके मन में अपनी बुराई होने का कुछ सन्देह अवश्य हुआ, किन्तु मार्ग की थकावट के कारण यह उन बातों पर कुछ भी विचार नहीं कर अपने रहने और भोजनादि का उपाय सोचने लगा।

जब कुछ रात्रि व्यतीत हुई तब वह बनियाँ उसकी बुराई करने पर उतारू हो अपने ग्राम के निकट के एक चाण्डाल के यहाँ गया और उसे रुपयों का लोभ दे कर उस पथिक का प्राणान्त करने के लिए राजी किया।

बटोही के हृदय में उस बनिये द्वारा अपनी बुराई होने की बात पहले ही से खटक रही थी। यह शीघ्रता से भोजनादि कर के अपने रुपये की थली ले कोठरी के पास ही वाले एक वृक्ष के नीचे जा कर छिप रहा।

बनिये ने जिस कोठरी को उस बटोही के सोने के लिए दिया था, ठीक उसी कोठरी में उस बनिये का गोपाल नामक एक लड़का नित्य आ कर सोया करता था। वह लड़का अपने प्रति दिन के नियमानुसार जा कर उसी कोठरी में उस दिन भी सो रहा।

जब अर्द्ध-रात्रि व्यतीत हो गयी तब वह बनियाँ उस पथिक को उसी कोठरी में सोया हुआ जान उसे मरवाने की इच्छा से

उस चाण्डाल को ले उपस्थित हुआ और उसने उसे वह कोठरी दिखा कर सोये हुए बटोही को मारने का संकेत कर दिया।

चाण्डाल ने लोभवश उस कोठरी में जाकर उस सोये हुए व्यक्ति का प्राणान्त किया और तब रुपयों की थैली टटोलने लगा। किन्तु रुपयों के नहीं मिलने पर वह शीघ्र वहाँ से रफूचक्कर हो गया। जब उस बनियें ने जा कर रुपयों की खोज की और जब रुपये नहीं मिले तब वह अत्यन्त भयभीत हुआ और बिचारने लगा कि मैंने व्यर्थ ही लोभ में पड़ कर इस पथिक को मरवा डाला। अब प्रातः काल हो जाने के डर से उसने ज्योंही उसके पैरों को पकड़ कर निकटवाले जङ्गल में फेंकना चाहा त्योंही उसकी दृष्टि अपने लड़के के शरीर पर जा पड़ी और वह इस दुर्घटना को देख कर "हा पुत्र! हा पुत्र! कह कर विलाप करने लगा और अपने कर्त्तव्यों पर अपने को धिक्कार देने लगा। किन्तु मारे भय के उसने अपने लड़के को जङ्गल में ले जाकर फेंक दिया और आप चुपचाप अपने घर में जा कर पड़ रहा।

जब प्रातःकाल हुआ तब वह अपने लड़के को खोंजने लगा। कुछ देर पोछे उसने अपनी बुराइयों पर विचार कर पुत्र के शोक में अपना प्राण भी त्याग कर दिया।

प्रश्न—बुराई कर कोई सुख पा सकता है या नहीं?

,,—बनियें को दूसरे की बुराई करने का क्या फल मिला?

व्याकरण—"वह टोपी जो कल चार आने में मोल ली गयी थी आज भूल गयी" यह एक ऐसा वाक्य है जिस में "वह टोपी आज भूल गयी।"

प्रधान वाक्य और "जो कल चार आने में मोल ली गयी थी" अधीन वाक्य है। इस लिए ऐसे वाक्य को जिस में एक प्रधान और एक या कई अधीन वाक्य हों "मिश्र वाक्य" कहते हैं।

अभ्यास— ऊपर के पाठ में मिश्र वाक्यों के तीन उदाहरण ढूंढ़ो।

भ्रातृ-प्रीति

आज कैसा मङ्गलमय दिवस है। अयोध्या नगरी की छटा कुछ और ही है। जिस ओर दृष्टि जाती है उधर ही लोगों के आनन्द की सीमा नहीं मिल रही है। घर-घर द्वार-द्वार गली गली प्रत्येक मनुष्य के यहाँ दधि, दूर्वा एवं आम्र पल्लवादि माङ्गलिक वस्तुएँ रक्खी हैं। आबाल वृद्ध, स्त्री-पुरुष प्रत्येक व्यक्ति के मुख पर प्रसन्नता की झलक दिखायी पड़ रही है।

राज-कर्म्मचारी दौड़ कर इधर उधर काम कर रहे हैं। महाराज दशरथ अपने गुरु वशिष्ट और मन्त्री सुमन्त के साथ सभा में विराजमान हैं। कल श्रीरामचन्द्रजी का राज्याभिषेक होगा यह समाचार सुन कर अयोध्यावासी कौन ऐसा व्यक्ति होगा जिसके हृदय में आनन्द की लहरें न उठती हों। राज-प्रासाद की रानियों का हाल तो पूछना ही क्या है? मातायें प्रेम तथा आनन्द में मत्त हो प्रफुल्लचित से अभिषक की सामग्री प्रस्तुत कर रही हैं।

होनहार बड़ा प्रबल है। रानी कैकेयी रामचन्द्र का अपने

पुत्र से भी बढ़ कर प्यार करती थी पर आज अपनी दासी मन्थरा के बहकावे में पड़ कर राम ऐसे सपूत पूत को भी जङ्गल में भेजने तथा अपने पुत्र भरत को राजगद्दी पर बैठाने के लिए उसने महाराजा दशरथ को विवश किया। राजा दशरथ ऐसा करने के लिए वचनबद्ध हो चुके थे। इस हेतु उनकी बुद्धि कुछ काम न कर सकी।

प्रातःकाल हुआ। लोगों के हृदयाकाश में जहाँ राज-तिलक देखने की प्रगाढ़ अभिलाषा जगमगा रही थी वहाँ शोकपूर्ण मेघ ने अपना कुछ और ही रङ्ग जमाया। रानी कैकेयी की आज्ञा से श्रीरामचन्द्र जी उस महल में बुलाये गये जहाँ राजा दशरथ शोकसागर में निमग्न हो रहे थे। अपनी विमाता कैकेयी से पिता के दुःख का कारण जान लेने पर वे सहर्ष जङ्गल जाने को तैयार हो गये और अपने पिता के पास जाकर उन्हें आश्वासन देने लगे कि आप मेरे लिए व्यर्थ चिन्ता न करें। मेरे प्राण-प्यारे बन्धु भरत राज्य पावेंगे इससे बढ़ कर और क्या आनन्द होगा? पिता जी ऐसा करने से प्रथम तो आप की आज्ञा की पूर्त्ति और दूसरे मेरे परम प्यारे भरत राजतिलक पावेंगे इससे बढ़ कर मेरे लिए क्या सौभाग्य होगा। यह तो मेरे लिए "एक पन्थ दो काज" है। बहुत पूछने पर भी जब राजा दशरथ ने कुछ प्रत्युत्तर न दिया तो वे अपनी माता से ही आज्ञा ले कर जङ्गल जाने की तैयारी करने लगे।

इधर सीता ने ऐसा हठ पकड़ा कि स्वयं श्रीरामचन्द्र जी

तथा नगर की स्त्रियों के समझाने पर भी उन्हों ने अपने पति को छोड़ अयोध्या में रहना स्वीकार नहीं किया।

जब राम और सीता के वनगमन की सूचना लक्ष्मण के कानों तक पहुँची तो वे अकस्मात् चौंक पड़े। फिर कुछ देर विवेक-शून्य हो मूर्त्तिवत् खड़े रहे। इस हृदयविदारी समाचार ने लक्ष्मण के हृदय पर गहरी चोट पहुँचायी। वे सहसा उठे और रामचन्द्र के पास जा हाथ बाँध कर खड़े हो गये। श्रीरामचन्द्र जी अपने प्रिय भाई लक्ष्मण के अभिप्राय को समझ कर उन्हें शिक्षा देने लगे कि "मैं जङ्गल जा रहा हूं। पिता जी मेरी चिन्ता से शय्या-सेवन कर रहे हैं और फिर भी भरत और शत्रुघ्न ननिहाल में हैं; ऐसी दशा में यदि तुम मेरे साथ वन जाओगे तो अयोध्या के सब कार्य्य नष्ट भ्रष्ट हो जायंगे। फिर जिस राजा के राज्य में प्रजा दुःखी रहती है वह अवश्य नरकगामी होता है। इन सब बातों को सोच विचार कर घर में रहो और अपने सुप्रबन्ध से माता पिता तथा प्रजा को आनन्दित करो।"

इतना सुनना था कि लक्ष्मण की मुखप्रभा ऐसी क्षीण हो गयी जैसी पाले के पड़ने से कमल की। असाधारण प्रेम के कारण वे उत्तर नहीं दे सके और व्याकुल हो कर श्रीरामचन्द्रजी के चरणों पर गिर पड़े। पुनः हाथ जोड़ कर विनती करने लगे कि "हे स्वामी! आपने मुझे अच्छी शिक्षा दी, किन्तु मुझे अपनी कातरता से वह कठिन जान पड़ती है। जो मनुष्यों में श्रेष्ठ, धैर्य्य तथा धर्म्म की धुरी को

धारण करनेवाले हैं वे ही धर्म्म शास्त्र और नीति के अधिकारी हैं; मैं तो आपका सेवक हूं; सेवा ही मेरा सर्व्वोपरि धर्म्म है। हे नाथ! मैं तो आपके प्रेम से पला हुआ बालक हूं; नीति और शास्त्रादि का बोझ उठाने में मैं ठीक उसी प्रकार असमर्थ हूं जिस प्रकार हंस का बच्चा मन्दराचल पहाड़ उठाने में।

जहाँतक संसार में प्रेम और नाते हैं तथा शास्त्रों ने स्नेह का विश्वास दिखाया है उन सब का मूल कारण मैं आप ही को समझता हूँ, हे दीनबन्धो! आपके अतिरिक्त मेरा कोई नहीं है।"

तब श्रीरामचन्द्रजी ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि लक्ष्मण की प्रीति अगाध और अवर्णनीय है; यह अवश्य ही मेरे साथ जायगा। इस हेतु उन्हों ने लक्ष्मण से कहा कि यदि तुम्हारी इच्छा ऐसी ही है तो माता से आज्ञा लेकर मेरे साथ बन चलो।

इतना सुनते ही लक्ष्मण के हृदय में प्रेम तथा आनन्द की धारा बह चली। उस समय "सूखत धान परा जनु पानी" की कहावत चरितार्थ होने लगी। अपनी माताके पास पहुँच कर उन्हों ने रामचन्द्रजी के साथ वन जाने की आज्ञा माँगी। उनकी माता सुमित्रा भी बड़ी दूरदर्शी और सहनशीला थीं। उन्होंने तुरत लक्ष्मण को रामचन्द्र के साथ बन जाने की आज्ञा दे दी। साथ ही साथ सुमित्रा ने अपने पुत्र को उपदेश भी दिया कि वन में राम को पिता और सीता को माता समझ कर तन मन से उनकी सेवा में लीन रहना। अब तो लक्ष्मण के हृदय में जो भ्रातृ-प्रीति लह लहा रही थी उसके बढ़ने में उनकी

माता ने और भी सहायता दे दी। अब वे सानन्द रामचन्द्र जी के पास दौड़ कर पहुँचे।

अब राम सीता और लक्ष्मण तीनों जङ्गल जाने के लिए घर से प्रस्थान करने को तैयार हैं। श्रीरामचन्द्र जी को राज्याभिषेक का मङ्गलमय समाचार सुनाकर शीघ्र ही १४ वर्ष बनवास का कठिन आज्ञा सुनायी जाती है पर उनकी मुखकान्ति तनिक भी मलिन नहीं होती है बल्कि भरत का राज्य तिलक सुन कर वे बहुत अधिक आह्लादित होते हैं। अहा! ऐसे आदर्श पुरुषों की जितनी प्रशंसा की जाय थोड़ी ही है।

भरत की भ्रातृ-प्रीति तो और भी अकथनीय तथा अलौकिक है। पिता के स्वर्गवास के अनन्तर वे अपने ननिहाल से अयोध्या लौटे। गृह पर आकर उन्होंने देखा कि "रङ्ग में भङ्ग" हो गया है। अब तो वे बहुत विलाप करने लगे। उन्होंने राजपाट का भी तिलाञ्जलि देकर अपने भाई के साथ अटल प्रीति रक्खी। पुरवासियों और गुरु के समझाने पर भी इन्हों ने बड़े भाई राम के रहते राज्य करना स्वीकार नहीं किया।

अन्त में भरत ने माताओं तथा पुरवासियों को सङ्ग ले जङ्गल में जा श्रीरामचन्द्र को लौटाने तथा अयोध्या में आकर राज्य करने के लिए उनसे बिनीत प्रार्थना की। श्रीरामचन्द्र ने अनके ज्ञानमय उपदेश दे और नीति पूर्ण बातें कह कर उन्हें अयोध्या लौटा दिया। अयोध्या लौट आने पर भी भरत ने राज्य करना अनुचित समझ और राज्य का सम्पूर्ण भार गुरु के

हाथों में सौंप, आप नन्दीग्राम में एक कुटी बना कर चौदह वर्ष अवधि की प्रतीक्षा करने लगे।

यह क्या ही अनुपम त्याग है। कैसा विलक्षण दृश्य है और भ्रातृ-प्रीति का कैसा सर्वोत्तम एवं अवर्णनीय आदर्श है।

प्रश्न—लक्ष्मण की भ्रातृप्रीति का कुछ वर्णन करो।

व्याकरण—"यह क्या ही विलक्षण दृश्य है और भ्रातृप्रीति का कैसा सर्वोत्तम आदर्श है" यह एक ऐसा वाक्य है जिस में दो स्वतन्त्र वाक्य "और" शब्द से जोड़ दिये गये हैं। इस लिए ऐसे वाक्य को संयुक्त वाक्य कहते हैं।

अभ्यास—(१) ऊपर के पाठ में संयुक्त वाक्यों के पांच उदाहरण ढूंढ़ो।

(२) ऊपर के पाठ से तीनों प्रकार के वाक्यों के तीन तीन उदाहरण दो।

Printed by S. B. Bhattacharyya, at the Model Litho & Printing Works
66-1A, Baitakhana Road, Calcutta.

गणित

अर्थमेटिक द्वितीय और तृतीय भाग, लाक और लुइस साहब द्वारा संगृहीत। मूल्य ॥=)

नवीन रेखागणित पहला और दूसरा भाग, हाल और स्टीवन्स कृत। मूल्य ॥)

नवनी रेखागणित पहला, दूसरा और चौथा भाग हाल और स्टीवन्स कृत। मूल्य ॥≡)

नवीन रेखागणित चौथा भाग हाल और स्टीवन्स मूल्य ≡)

हिन्दी बीजगणित, प्रथम भाग, शुकदेव पाण्डेय रचित। मूल्य २)

इतिहास और भूगोल

भारतवर्ष का इतिहास ३ और ४ स्टैण्डर्ड के लिए, ई, मार्सडन का बनाया मूल्य ।≡)

भारतवर्ष का इतिहास ५ और ६ स्टैण्डर्ड के लिए, ई, मार्सडन और रामचन्द्र प्रसाद का बनाया मूल्य ॥)

भुवनमाया—भौगोलिक परिभाषाकी शिक्षा के लिए सुरक्षित पट आकार ५०″×४०″ मूल्य १)

निम्नप्राथमिक पाठशालाओं के शिक्षकों के लिए भूगोल-पाठ-टीका जे, एच्, थिकेट एम, ए, कृत मूल्य ॥)

उच्चप्राथमिक पाठशालाओं के शिक्षकों के लिए भूगोल-पाठ-टीका जे, एच्, थिकेट एम, ए, कृत। मूल्य ॥)

मैकमिलन ऐराड कम्पनी, लिमिटेड

कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, लण्डन

Hindi Sahitya Bal-manoranjan Part II.—for Class V. Price 4 As.